शारदा लिपि दीपिका

लेखक

डॉ. श्रीनाथ तिक्कू

ए. एम. एस. (बी. एच. यू.) शास्त्री

भूतपूर्व प्रिंसिपल एण्ड मेडिकल सुपरिन्टेण्डेन्ट

आ. एवम् यू. ति[illegible] कालेज

नई दिल्ली

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्

ए-40, विशाल इन्क्लेव, राजा गार्डन

नई दिल्ली-27

प्रकाशकः
डॉ मण्डन मिश्रः, निदेशकः
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्
ए-४०, विशाल इन्क्लेव, राजा गार्डन
नई दिल्ली-२७

१९८८ प्रथम संस्करण

मूल्यः

मुद्रकः
अमर प्रिंटिंग प्रेस
८/२५, विजय नगर, दिल्ली-९

सम्पादकीय

भारतवर्ष की वाङ्मयी विभूति की सुविकसित समृद्धि का बहुत सा श्रेय कश्मीर-मण्डल को प्राप्त हुआ है। हमारी प्राचीन लिपियों में से कश्मीर मण्डल में प्रचलित शारदा लिपि का विशेष महत्त्व यह है कि कश्मीर में लिखे गए शास्त्रों और साहित्यिक ग्रन्थों की प्राचीन पाण्डुलिपियां इसी लिपि में लिखी हुई जहां तहां मिलती हैं। अतः संस्कृत वाङ्मय के अनेक ही विषयों पर शोध कार्य करने वाले विद्वान के लिए शारदा लिपि को सीखना आवश्यक बन जाता है।

शारदा लिपि का दूसरा विशेष महत्त्व इस कारण से बनता है कि बीज मन्त्रों को आलम्बन बनाकर की जाने वाली तांत्रिक साधनाओं में शारदा लिपि के ही अक्षरों का ध्यान किया जाता है। ऐसी तांत्रिक साधना का पारिभाषिक नाम मातृका या मालिनी है। शङ्कराचार्य ने सौन्दर्य लहरी में "मुखं बिन्दुं कृत्वा" इत्यादि पद्य में जिस कामकला बीज का काव्यात्मक वर्णन किया है उस बीज का आकार शारदा लिपि का आश्रय लेते हुए ही उस काव्यात्मक वर्णन के साथ मेल खाता है। नागरी लिपि के साथ उसका तालमेल ठहराने के लिए अनेकों दिग्गजों ने बहुत प्रयत्न किये परन्तु उनमें कोई भी मानव मस्तिष्क को सन्तुष्ट नहीं कर पाया। मातृका की उपासना में उपयुक्त होने के कारण ही अलबेरूनी के समय में शारदा लिपि का लोक प्रसिद्ध नाम सिद्ध मातृका था। बाली द्वीप में इस लिपि को अब भी सिद्धम् लिपि कहते हैं। इस लिपि के प्रचार जापान के बौद्ध तांत्रिक साधकों में भी पर्याप्त मात्रा में रहा है।

शारदा कश्मीर मण्डल की प्रधान देवी है। अतः कश्मीर देश को शारदा देश भी कहा जाता रहा। इस देश में प्राचीन काल में प्रचलित

इस लिपि को इसी लिए शारदा लिपि कहा जाता रहा ।

शारदा लिपि का जन्म मूलतः ब्राह्मी लिपि से हुआ है। उसी लिपि से उत्तर भारत की अन्य भारतीय लिपियों की भी उत्पत्ति हुई है। गुरुमुखी तो शारदा का ही एक विशेष रूपान्तर है। बंगाली, देवनागरी, पंजाबी और गुजराती लिपियों का प्रयोग मुद्रण कला में भी चलता रहा है। अतः उन लिपियों को लोग पुस्तकों की सहायता से सीख सकते हैं।

उन लिपियों को उन-उन प्रदेशों की पाठशालाओं में पढ़ाया भी जाता है। परन्तु खेद की बात है कि शारदा लिपि को सीखने के इस प्रकार के साधन कहीं भी उपलब्ध नहीं। इस शारदा लिपि को सीखने की आवश्यकता संसार भर के उत्कृष्ट शोध छात्रों में से उन सभी को अवश्य पड़ती है जो भारतीय वाङ्मय का गहरा अवगाहन करते हैं। भारतीय शास्त्रों के अनेकों अत्युत्तम ग्रन्थों की प्राचीन प्रामाणिक पाण्डुलिपियां शारदा लिपि में बहुत संख्या में विद्यमान है। उत्कृष्ट शोध कार्य करने के लिए उन पाण्डुलिपियों को पढ़ना आवश्यक बन जाता है। परन्तु इस लिपि को सीखने के साधन कहीं भी सुलभ नहीं।

भारतीय विद्याओं के शोध कार्य के क्षेत्र में विद्यमान इस महती त्रुटि को दूर करने का शिव संकल्प राष्ट्रिय-संस्कृत-संस्थान के निदेशक महोदय डा. श्री रामकरण जी शर्मा के मन में उद्‌बुद्ध हो गया और उसी के फलस्वरूप काश्मीर वाङ्मय के एक अद्वितीय विद्वान् डा. श्रीनाथ जी तिक्कू ने इस पुस्तक का निर्माण किया, जिसे हम जम्मू के श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शैवदर्शन शोध केन्द्र की ओर से प्रकाशित कर रहे हैं। इस पुस्तक से संसार भर के संस्कृत विद्वानों और शोध-छात्रों को बहुत बड़ा लाभ हो सकता है।

पुस्तक का नाम है "शारदा-लिपि-दीपिका"। पुस्तक के तीन प्रकरणों को 'दीप-शिखा' ऐसा नाम दिया गया है। पुस्तक की पहली 'दीप शिखा' एक विशेष और सविस्तार उपोद्‌घात है। इसमें पहले तो शारदा लिपि के उद्‌भव और विकास के इतिहास पर विशेष प्रकाश डाला गया

है, फिर शारदा लिपि के साथ मिलती जुलती अन्य पश्चिमोत्तरीय आर्य लिपियों का परिचय देते हुए शारदा लिपि के साथ उनके सम्बन्ध पर प्रकाश डाला गया है। तदनन्तर इतिहास के भिन्न-भिन्न युगों में शारदा लिपि की स्थिति का ब्योरा दिया गया है।

दूसरी शिखा में पहले तो शारदा-लिपि के प्रशिक्षण की प्राचीन परम्परा पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है और साथ ही लिपि के वर्णों का भी परिचय दिया गया है। साथ-साथ नागरी लिपि के समानान्तर वर्ण भी स्थान-स्थान पर दिये गये हैं। वर्णों के परिचय के अनन्तर मात्राओं और अङ्कों का भी परिचय उसी तरह दिया गया है।

शारदा लिपि के सीखने में एक विशेष कठिनाई संयुक्त-व्यञ्जनों के विषय में आती है। इस लिपि में संयुक्त-व्यञ्जनों को एक दूसरे के ऊपर चढ़ाकर ऐसे लिखा जाता है कि संयुक्त-व्यञ्जनों वाला अक्षर लगभग एक ही अक्षर का स्थान [Space] लेख में भी ले ले, चाहे नीचे की ओर अधिक स्थान क्यों न ले। ऐसे संयोगों में व्यञ्जन वर्णों के आकार में बहुत बार कुछ परिवर्वतन भी आ जाता है। इसलिए इस 'शिखा' के अनेकों पृष्ठों द्वारा व्यञ्जन संयोगों पर विशेष प्रकाश डाला गया है और साथ साथ नागरी लिपि में भी उन संयुक्त अक्षरों को लिखा गया है। दो से अधिक व्यञ्जनों के विशेष-विशेष संयोगों के आकार पर भी पर्याप्त मात्रा में प्रकाश डाला गया है। इन संयुक्त अक्षरों का पर्याप्त अभ्यास हो जाए तो शारदा की पाण्डुलिपियों को बिना रोक टोक के पढ़ा जा सकता है। इस शिखा के अन्त पर अभ्यास के लिये प्रसिद्ध मन्त्रों, गीता आदि लोक प्रिय शास्त्रों तथा शिवमहिम्नस्त्रोत्र आदि प्रसिद्ध स्त्रोत्रों के श्लोकों को शारदा लिपि में दिया गया है। सहायता के लिए साथ ही साथ देवनागरी लिपि में भी उन्हें रखा गया है। देवनागरी लिपि की सहायता से छात्र शारदा लिपि को पढ़ना या लिखना बिना किसी शिक्षक की सहायता से सीख सकेंगे। इस तरह से यह पुस्तक शारदा लिपि का एक 'स्वयं शिक्षक' है जो संसार भर के संस्कृत-विद्वानों के लिये बहुत ही उपयोगी होगा।

पुस्तक की तीसरी शिखा में शारदा लिपि के अनेकों अभिलेखों शिलालेखों और प्राचीन पाण्डुलिपियों के अनेकों फोटोस्टैट प्रतिलिपियां

दी गई हैं। इन से इस बात पर पर्याप्त प्रकाश पड़ सकता है कि इतिहास के भिन्न-भिन्न युगों में शारदा लिपि को कैसे लिखा जाता था।

हम इस शुभ कार्य के लिए डॉ. रामकरण जी शर्मा को तथा डॉ. श्रीनाथ जी तिक्कू को हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

जम्मू
ता. ३०-३०-१-१९८३

(ह.) **डॉ. बलजिन्नाथ** पण्डित
शोध-निदेशक
श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ
जम्मू।

प्रस्तावना

मानव अपने अतीत का दर्शन अपने प्राचीन ग्रन्थों में करता है और इन्हीं के द्वारा अपने ज्ञान का आदान-प्रदान तथा विकास वर्तमान में भी करता रहता है। ग्रन्थ प्रत्येक देश, जाति और समुदाय को विकसित और सुसंस्कृत होने के लिए एक उत्कृष्ट भूमिका ही नहीं निभाते बल्कि बौद्धिक उन्नति तथा विकास के लिए प्राणभूत कहे जा सकते हैं। ग्रन्थों का शरीर उनके पत्र (कागज) आदि के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होकर तब तक एक निश्चेष्ट और मूक प्राणी की तरह है जब तक वह कुछ बोलना शुरू न करे। किन्तु यह बोलना उसकी लिपि के द्वारा ही होता है, जो कि भाषा के रूप में प्रस्फुटित होकर अपना सन्देश देती रहती है। हां, यदि हम उस लिपि को पढ़ सकें तभी। आज हम 'मोहन-जो-दारो' या 'हरप्पा' के ध्वंसावशेषों को देख सकते हैं परन्तु उन प्रस्तर खण्डों को, जिसे उन्होंने उत्कीर्ण कर भावी जनता को अपना परिचय एवं सन्देश देने के लिए रखा था, हम लिपि का ज्ञान न होने के कारण पढ़ने में अक्षम हैं। इसका कारण यही है कि काल के परिवर्तन के साथ मानव भी बदलता गया और लिपि को भी इतना भूल गया कि आज वह अपने अतीत को यथार्थरूप में जानने के लिये बढ़ती हुई उत्सुकता को पूर्ण करने के लिये सर्वथा साधनहीन सा प्रतीत होता है।

हमारे उत्तरीय भारत में प्रायः जितना भी प्राचीन ग्रन्थ भण्डार पाया गया है वह देवरागरी शारदा एवं अन्य अर्वाचीन क्षेत्रीय लिपियों में उपलब्ध हुआ है। इनमें अधिकतर मुद्रित हुए हैं और बहुत से अभी तक भी मुद्रित नहीं हो सके हैं।

ऑव्फ्रक्ट [Aufrecht] महाशय ने भारत में प्राप्त हुई प्राचीन पाण्डुलिपियों का जो 'एक बृहत् सूची-पत्र' [Catalogus Catalogorum] तैयार किया था और उत्तर प्रदेश सरकार ने जो पाण्डुलिपियों का एक 'बृहत्-सूचीपत्र' कई भागों में लखनऊ से प्रकाशित किया है, उसको देखने से ज्ञात होता है कि अभी तक शारदा लिपि में लिखी हुई बहुत सी पाण्डु-लिपियां मुद्रित नहीं हुई हैं । इसके अतिरिक्त लण्डन की India Office Library, बर्लिन, पेरिस आदि यूरोपीय महानगरों के पुस्तकालयों में भी इस लिपि में लिखित अनेकों अमुद्रित एवं मुद्रित ग्रन्थ संगृहीत हैं । इसी तरह भारत के राजकीय या अराजकीय पुस्तकालयों में भी, जैसे—वारा-णसी, पटना, कलकत्ता, जयपुर, तँन्जोर, त्रिवेन्द्रम् आदि नगरों के पुस्तकालयों में शारदा लिपि के अनेकों अप्रकाशित ग्रन्थ संग्रहीत हैं । इन सब स्थानों के इन पुस्तकालयों में रखे गये बहुत से शारदा लिपि में लिखे गए ग्रन्थ निष्णात गवेषकों की प्रतीक्षा कर रहे हैं जिनको वह अपनी अन्तरवस्थित गाथा सुना सके और बहुत सम्भव है उनसे हमारे अतीत की गरिमा और भी उज्ज्वल हो ।

शारदा लिपि का ज्ञान न होने से इसके चिरन्तन सेवी कश्मीरी भी किस प्रकार इसका नाश कर रहे हैं इसका उदाहरण यहां प्रसंगवश एक अपने आँखों देखी घटना से उपस्थित करता हूं—

बात सन् १९५४ फाल्गुन (मार्च) की है । अमृतसर में प्राचीन बसे हुए कश्मीरी पण्डितों के घर में एक बड़ा कमरा जीर्ण पुस्तकों से भरा हुआ था । पुस्तकें शारदा लिपि में लिखी थी । उस घर के सभी पुरुष मर गये थे । केवल एक विधवा रह गई थी । उस के मन में यह विचार उठा कि उसके परिवार को कालग्रस्त करने में इन्हीं पुस्तकों का होना मूलकारण है । उसने उन सबको अमृतसर के एक मन्दिर[१] में लाकर पटक दिया । वहां भी एक कमरा इनसे भर गया । मैं अमृतसर आया हुआ था । मुझे अपने गांव के एक विद्याप्रेमी श्रद्धेय बुज़ुर्ग [पं. आनन्दप्रसाद शेर] ने कहा कि शिवाले में ज़रा आ जाना । वहां आप संस्कृत के शारदा लिपि बद्ध ग्रन्थों को देखना । शायद आपके काम की हों । मैं कार्यवश जल्दी वहां न जा

१. कश्मीरी पण्डितौ का शिवाला, फरीदे चौक, अमृतसर ।

सका। एक सप्ताह के बाद गया तो वहां शारदा लिपि में लिखे गए कुछ पत्र ही विखरे हुए पड़े थे। यह सब ग्रन्थ तीन महीनों से वहां पड़े हुए थे। वहां ठहरे हुए कश्मीरी लोगों ने चुल्हे में आग बनाने के लिये या चिलम पीने के लिये जलाये थे। लिपि को देखने से प्रतीत होता था कि ग्रन्थ प्राचीन रहे होंगे। हमें इसका अभी तक भी पश्चात्ताप होता है।

यह है एक अनुभूत घटना की बात। इसी प्रकार न जाने कितने ही अमूल्य ग्रन्थ अभी भी लोंगों के घरों में पड़े होंगे।

सन् १७५२ में मुझे अपने गांव मतिण्ड में ही एक व्यक्ति से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। वह भूतपूर्व दरभंगा नरेश के अन्तरंग सचिव थे और संस्कृत पाण्डुलिपियों की खोज के लिये मेरे पास आये थे। उन्होंने मुझे कहा कि उन्होंने राज्य के द्वारा तिब्बत से बहुत से जीर्ण ग्रन्थ उपलब्ध कराये थे। उनमें शारदा लिपि में लिखित 'शिवपुराण' तथा 'राजतरङ्गिणी' भी थे।

राजानक रुय्यक का 'अलंकार[1]-सर्वस्व' मेरे एक मित्र श्री प्रो. पृथ्वीनाथ पुष्प को श्रीनगर के एक मुसलमान महोदय के घर[2] में होने का पता लगा था। इसी प्रकार अनेकों हस्तलिखित ग्रन्थ यत्र-तत्र अभी भी प्राप्त हो रहे हैं। अत एव लिपि का ज्ञान होना कितना महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है? यह विद्वान लोग स्वयं विचार कर सकते हैं।

शारदा लिपि को न तो राजकीय स्तर से और न ही अराजकीय स्तर से पढ़ाने की कहीं व्यवस्था है। जब कि यह लिपि अपनी जन्मभूमि में ही लुप्त होती जा रही हैं तो और प्रान्तों में इस की उन्नति के लिये क्या सम्भावना हो सकती है? परन्तु इस लिपि में लिखे गए अमुद्रित या मुद्रित[3] ग्रन्थों के आधार पर अनुसन्धान करने वाले स्नातकों, शोध छात्रों

१. यह मुद्रित हुआ है। परन्तु कुछ पूर्ण सा नहीं लगता। यह मुझे प्रो. पुष्प साहेब से १९५७ में ज्ञात हुआ था।

२. यह श्रीनगर के 'बोहरी कदल' में रहते थे।

३. रोमन लिपि में मुद्रित तो हैं परन्तु शारदा लिपि है या नहीं कहना कठिन है।

गवेषकों एवं जिज्ञासु विद्याव्यसनी लोगों के लिये इस लिपि को सीखने के लिये कोई पुस्तक नहीं बनी है। इसका अनुभव कुछ विद्वान् करते थे। यह संयोग की बात है कि एक दिन ऐसा सुअवसर भी आया जब कि मुझे इस दिशा में इस त्रुटि को पूर्ण करने की प्रेरणा मिली और मैंने इस 'रचना' का श्रीगणेश किया।

पहले तो मैंने सोचा था कि यह एक लघु पुस्तिका के रूप में अनायास ही तैयार हो जायेगी, परन्तु जब मैं इसकी रूप-रेखा बनाने लगा तो रचना की उपयोगिता और उपादेयता के लिये यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि 'शारदा लिपि' की प्राचीनता और व्यापक प्रचार का अनुसन्धानात्मक विवेचन तथा विस्तृत विवरण देना बहुत जरूरी है। जब मेंने सर जार्ज ग्रीयर्सन महोदय का 'Linguistlc Suruey of India' को देखा तो मेरा विचार और भी दृढ़तर हो गया। आज तक किसी भी भारतीय विद्वान ने इस दिशा में कोई अनुसन्धानात्मक कार्य नहीं किया। श्रीग्रीयर्सन और अन्य दो तीन विद्वानों ने विदेशी होते हुए भी जितना इस लिपि की प्राचीनता और उपयोगिता पर लिखा है वह प्रशंसनीय है।

मैंने यह विचार दृढ़ किया कि मैं इस लिपि पर इस प्रकार की रचना लिखूं जो 'स्वयं शिक्षक' की तरह बन जाय और स्नातक, अनुसन्धानकर्ता और जिज्ञासा रखने वाले सबके लिये उपयोगी, आकर्षक तथा उपादेय हो। शारदा लिपि के सीखने में सबसे बड़ी कठिनता संयुक्त-अक्षरों को जानने में उपस्थित होती है। यों तो केवल वर्ण ज्ञान में विशेष कठिनता नहीं होती परन्तु संयुक्त-अक्षरों को पढ़ने या लिखने के लिए इस लिपि का बाल्यकाल से सीखना और फिर निरन्तर अभ्यास रहने की आवश्यकता है। संयुक्त अक्षरों को पढ़ना तथा लिखना ही लिपि का यथार्थ ज्ञान माना जा सकता है। इसीलिए इस पुस्तक की 'द्वितीया शिखा' में इसका ज्ञान होने के लिए देवनागरी उदाहरणों सहित पर्याप्त रूप से लिखा गया है और पाठक इसका निरन्तर अभ्यास करके स्वयं ही अल्प-समय में ही सुशिक्षित हो सकते हैं।

लिपि की व्यावहारिकता, अति प्राचीनता तथा व्यापकता को

सोदाहरण प्रस्तुत करने के लिये मैंने तृतीया शिखा' में कतिपय 'शिलालेखों एवं अभिलेखों का भी संकलन किया है और उनका परिचय पूर्वक विवरण भी दिया है । आजकल देश-विदेशों में उत्-खनन करके कई पुरातन अवशेष, पुस्तक, तथा शिलालेख प्राप्त होते हैं । गतवर्षों में मंगोलिया और ताजिकीस्तान [रूस] में भी कुछ प्राचीन शारदा लिपि में ग्रन्थ उपलब्ध हुए थे । ऐसे ऐसे प्राचीन लेखों एवं ग्रन्थों को पढ़ने में प्रतिभाशाली शोध-छात्रों तथा शारदा लिपि की प्राचीन पाण्डु-लिपियों के भण्डार को जानने की इच्छा रखने वाले विद्वानों के लिये यह पुस्तक अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी, ऐसी मेरी धारणा है ।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे शैवदर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् डॉ० श्री बलजिन्नाथ पण्डित महोदय से विशेष सहायता मिली और मार्गदर्शन हुआ और कुछ शिलालेखों और अभिलेखों की प्रतिलिपियां भी प्राप्त हुई, इसके लिये मैं उनका नितान्त आभारी हूं ।

जिन विद्वान् लेखकों के ग्रन्थों से मुझे सहायता मिली है उनमें विशेषकर सर जार्ज ग्रीयर्सन और श्री पी. एच. वोगेल महोदय विशेष उल्लेखनीय हैं । अतः इनके प्रति अपना आभार प्रकट करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं ।

मैं 'राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, देहली के निदेशक महोदय डॉ. श्रीराम-करण शर्मा का विशेष आभारी हूं जिनकी उत्साहवर्धक प्रेरणा से मैंने इस पुस्तक को लिखा और सम्पूर्णतया उपयोगी बनाकर सम्पूर्ण किया ।

मेरे कनिष्ठपुत्र आयुष्मान् 'शारदा कुमार' ने पुस्तकालयों से पुस्तकें ढूंढकर मुझे लाकर दी और सहायता की, वह भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं ।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे देहली के 'Delhi Public Library' तथा भारतीय पुरातत्त्व संग्रह (Indian Archives) और 'अभिलेखागार' के अधिकारियों ने ग्रन्थ आदि सामग्री उपलब्ध करायी, अतः मैं उनका आभारी हूं ।

अन्त में महाकवि भवभूति की

उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्यय निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ।।'

इस उक्ति के साथ में इस 'प्रस्तावना' को समाप्त करता हूं ।

श्रीनाथ तिक्कू

कालका जी
नई दिल्ली
२-३-८३

ग्रन्थकार का परिचय

मेरा जन्म कश्मीर में 'मार्तण्ड' (मटन) ग्राम के भारद्वाजगोत्रीय त्रिक (तिकू) वंश के ब्राह्मण घर में सन् १९१४ में ज्येष्ठामावस्या के दिन हुआ था। मेरी माता राधा देवी १९३३ में ही स्वर्ग वासिनी हुई थी। मेरे पिताजी पण्डित विष्णुदास जी १९४७ में स्वर्ग सिधार गये। मेरा अक्षरारम्भ 'शारदा' में ही हुआ। मैंने श्रीनगर के राजकीय संस्कृत पाठशाला (स्टेट हाई स्कूल) में ६ वर्ष तक अध्ययन रत होकर पंजाब यूनिवर्सिटी लाहौर से १९३३ में 'शास्त्री' परीक्षा उत्तीर्ण की। मैं इन सभी परीक्षाओं में स्टेट में सर्व प्रथम रहा और मुझे तीनों बार जम्मू कश्मीर राज्य से 'पारितोषक मिलते रहे। १९३३ में मैं बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय (B. H. U) के आयुर्वेद कालेज में महामना मदन मोहन मालवीय जी की अनुकम्पा से प्रविष्ट हुआ और १९३९ में A. M. S. (आयुर्वेदाचार्य प्रथम श्रेणी में मेडिसिन एण्ड सर्जरी) की डिग्री प्राप्त की। १९४० से १९४७ (अगस्त) तक स्वर्गीय गोस्वामी गणेशदत्त जी की सद्भावना से लायल-

पुर (पाकिस्तान) के ऋषिकुल आश्रम (महाविद्यालय) में प्राध्यापक, चिकित्सक तथा छात्रावास का प्रधान अधिष्ठाता का कार्य करता रहा। भारत विभाजन के अनन्तर अपने ग्राम 'मार्तण्ड' में ही कुछ वर्ष तक प्रैक्टिस करता रहा। इसके बाद श्रीनगर में 'शारदा पीठ' (महिला महाविद्यालय) के संस्कृत तथा हिन्दी विभागों का संचालन एवं अध्यापन का मानद रूप में कार्य किया और साथ ही श्रीनगर के नेशनल अस्पताल में R. M. O रहा। १९५९ अगस्त में मैं दिल्ली चला आया और यहाँ मूलचन्द खैरातीराम अस्पताल में चिकित्सक पद पर कार्य करता रहा। १९६५ अगस्त में दिल्ली के आयुर्वैदिक यूनानी तिबिया कालेज में प्रिन्सिपल और मेडिकल सुपरिण्टेन्डेण्ट के पद पर नियुक्त हुआ। १९६९ तक इस पद पर आसीन रहा यहाँ इसी समय में B. H. U. के पोस्ट ग्रेजुऐट (आयुर्वेद) संस्था की पाठ्य प्रणाली निर्धारिणी समिति (Board of Studies) का सदस्य तथा रीडर सेलेक्शन (Selection Committee) का विशेषज्ञ सदस्य (Expert Member) भी रहा। गत आठ वर्षों से अब दिल्ली में ही श्री बनारसीदास चान्दी वाला स्मारक सेवा केन्द्र में आयुर्वैदिक चिकित्सालय में इन्चार्ज एवं चिकित्सक का कार्य कर रहा हूँ।

हमारे पूर्वज फारसी भाषा और कश्मीरी भाषा एवं ज्यौतिष शास्त्र के विद्वान् रहे हैं और कवि कला में भी निपुण रहे हैं हमें संस्कृत भाषा का शैशवावस्था से हो अनुराग तथा इसकी ओर सहज आकर्षण रहा है जो निरन्तर बढ़ता रहा। कविता का अनायास पूर्वक ही उद्‌गम होता रहा है। विद्यार्थी काल से ही मैं संस्कृत में कविता करने की ओर प्रवृत्त रहता था अभ्यास करता था। कश्मीरी पण्डितों की संस्कृत साहित्य में रचनाओं की नामावली कश्मीरी ग्रन्थकारों का जीवन वृत्त इसका मैंने संकलन किया था जो 'संस्कृत में कश्मीर के ग्रन्थकार' इस नाम से तैयार था परन्तु दुर्भाग्य से भारत विभाजन के दिनों में अन्य पुस्तकों के संग्रह के साथ वह सब लायलपुर (पाकिस्तान) में ही रह गया। तब से मेरा मन निरुत्साहित सा हो गया और कुछ परिस्थितियाँ भी अनुकूल नहीं रहीं। वाराणसी में रहते हुए मुझे स्वर्गीय केदारनाथ शर्मा

सारस्वत ने जो कि एक प्रकाण्ड पण्डित थे प्रेरणा दी थी और मैंने 'काश्मीरिका ग्रन्थ कारा:' इसके नाम से एक 'ग्रन्थ रचना' को प्रारम्भ किया था और उन्होंने अपने 'सुप्रभातम्' नामक संस्कृत समाचार पत्र (पाक्षिक) में इसके पुस्तकरूप में क्रमशः छपाना भी प्रारम्भ किया था परन्तु फिर आर्थिक कठिनाइयों से पत्र का प्रकाशन बन्द हो गया।

इसके बाद सन् १९४१ में से प्रकाशित होने वाले 'श्री स्वाध्याय' नामक त्रैमासिक पत्रिका में पुनः 'कश्मीरी पण्डित और संस्कृत साहित्य' इस शीर्षिका से फिर लिखने लगा था। परन्तु कई कारणों से वह भी नहीं चल सका। श्रीनगर में 'हमदर्द' नाम से एक उर्दू समाचार पत्र श्री स्वर्गीय पं० प्रेमनाथ बजाज निकालते थे। उनकी प्रबल प्रेरणा से 'भूली हुई कहानियां' इस शीर्षक से 'हमदर्द' मेरे लेख संस्कृत के कश्मीरी ग्रन्थकार आदि विषयों पर १९४२ से दो वर्ष तक लगभग छपते रहे और बजाज साहब ने उनको अपने 'हमदर्द' के संग्रहालय में संग्रहीत भी किया था। वह राजनैतिक व्यक्ति थे। वह दफ्तर भी जल गया। और वह जेल चले गए। यह एक दुर्भाग्य या दुर्घटना का ही प्रभाव मान लीजिए।

मैं जिनके सम्पर्क में आया---

(१) **अमृत वाग्भवाचार्य**—यह महान सिद्धपुरुष एवं संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। मैं अपने बाल्यकाल से ही इनके सम्पर्क में आया था। यह मेरे प्रेरणास्रोत निरन्तर रहे। इनकी सब विषयों में गति थी। इनका मार्गदर्शन तथा स्नेह दिल्ली में १९८४ तक-जब यह ब्रह्मलीन हो गए—तब तक निरन्तर बना रहा।

(२) **महामना श्रीमदनमोहन मालवीय जी**—विश्व प्रसिद्ध श्री मालवीय जी की अनुकम्पा से ही मैं B. H. U. में आयुर्वेद महाविद्यालय में प्रविष्ट हुआ था मुझे इनके सम्पर्क में रहने का सौभाग्य निरन्तर ६ वर्ष तक प्राप्त हुआ। मैंने इनको १९३३ में संस्कृत में वत्र लिखा था। इसका उत्तर संस्कृत में ही इन्होंने दिया; मुझे याद है। यहाँ इसको उद्धृत करना अप्रासंगिक नहीं होगा—

मसूरीतः

"विद्यार्थिन् !

त्वदीय...तारीखकं पत्रं प्राप्तम्। त्वदीया विद्योपार्जनाभिलाषा प्रशंसनीया, त्वदीय पत्रं मया रजिस्ट्रार सन्निधौ प्रैषितम्, स नियमान् दृष्ट्वा लिखिष्यति त्वदोयः प्रवेशो भवितुं शक्यते वा न। यदि प्रवेशे कापि वैधिकी बाधा न वर्तते; तर्हि संप्राप्ते प्रवेशे त्वां शुल्कदानात् नूनं मोचयिष्यामि, इति त्वदोय हितचिन्तकः

मालवीयो मदनमोहनः
वाइस चान्सलर
काशी विश्व विद्यालय
५-६-१९३३

इस पत्र की मूल प्रति लायलपुर (पाकिस्तान) में ही रह गई काशी विश्वविद्यालय के वर्णना में मैंने 'नक्षत्र माला' नाम से एक लघु काव्य लिखा था इस पर मालवीय जी ने मुझे मेरे छात्रकाल में ही पारितोषक रूप में तात्कालीन सिक्कों के रूप में २० रुपए दिए थे। यह काशी की 'सुप्रभातम्' नामक संस्कृत की मासिक पत्रिका में छपा था।

(३) **गोस्वामी गणेशदत्त जी**—यह सनातन धर्म तथा कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता भारत प्रसिद्ध व्यक्ति रहे हैं 'संस्कृत' भाषा के प्रचार में अग्रणी थे। इनके सम्पर्क में १९४० से १९४७ तक इनके द्वारा संस्थापित 'ऋषिकुल महाविद्यालय लायलपुर' में रहा और स्नेहपात्र बना रहा।

(४) **डा. कान्ति चन्द्रपाण्डेय**—संस्कृत के अद्वितीय विद्वान थे विशेषकर प्रत्यभिज्ञानशील तथा अन्य ग्रन्थों के प्रसिद्ध लेखक थे डा० कान्तिचन्द्र का साक्षात्कार संयोग से १९३१ में श्रीनगर में हो गया था। इनके साथ मेरी प्रारम्भ से ही संस्कृत में ही बातचीत होती थी। संस्कृत में निरर्गल बोलने का अभ्यास इनसे से ही मुझे हो गया। इनका स्नेह तथा उत्साहवर्धक इनकी प्रेरणा और सहायता मुझे १९४० तक लगातार रही। इनके साथ मैं श्रीनगर में तीन मास तक रहा जब इनके साथ श्री अभिनव गुप्त सम्बन्धी स्थलों की यात्रा की थी। उन दिनों यह तन्त्रालोक, ईश्वर प्रत्यभिज्ञा आदि दर्शन सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन करते थे। और प्रत्यभिज्ञा' के भाष्यरूप 'भास्करी' का संकलन करते थे।

विषयानुक्रमणिका

प्रथमा-शिखा

द्वितीया-शिखा

तृतीया शिखा

शारदा लिपि दीपिका

प्रथमा-शिखा

श्री शारदास्ति विषयस्तत आगताऽयम्'

एक पाश्चात्य अन्वेषक श्री इल्मिसिली (Elmisilie) महाशय का कथन है कि 'शारदानन्दन' नामक किसी विद्वान् ने कश्मीरी भाषा के लिखने में इस लिपि का प्रयोग किया था, अतः इसका नाम 'शारदालिपि' पड़ा। यह मत उसने अपनी पुस्तक '(Kashmir Vocabulary) London संस्करण S.V. शातदा' इसमें व्यक्त किया है। इस विषय में सरजार्ज ग्रियर्सन लिखते हैं:—

'Kashmir is called sharada kshetra or land of goddess sharda and this is no doubt the origin of the name of the alphabet, although Elmisilie in his kashmir Vocabulary (London 192) S. V, Sharada mentions a tradition that it is so called in honour of Sharada Nandan who is said to have reduced kashmiri language in writing.

Sir George Grearson in his article on 'sharada Alphabet' Published in the journal of R.A.S. Page 78, 1916

इल्मिसिली महाशय का यह मत भ्रमपूर्ण लगता है। यह अन्वेषक उन्नीसवी सदी के प्रथम दशक में कश्मीर आये थे। यह सूचना उन को तत्कालीन किसी विशिष्ट विद्वान् से नहीं मिली होगी।

प्रसिद्ध भारतीय लिपि विद्वान रा. ब. गौरी शंकर हीराचन्द ओझा महाशय ने भी शारदादेश में उत्पन्न एवं विकसित होने के कारण ही लिपि का 'शारदा लिपि' नाम से प्रसिद्ध होना लिखा[1] है।

प्रसिद्ध जर्मन अन्वेषक डा. ब्यूह्लर (Bühler) १८६६ सन् ईसवी के लगभग प्राचीन ग्रन्थों की खोज के लिए कश्मीर आये थे। उन्होंने भी अपनी महत्त्वपूर्ण 'यात्राविवरण' में इस लिपि का शारदा देश में प्रचलित तथा उत्पन्न होने के कारण लिपि का नाम भी 'शारदा-लिपि' प्रसिद्ध

---

१. प्राचीन लिपि माला, देहली मुद्रित, पृष्ठ १३६

हो गया, ऐसा मत[१] व्यक्त किया है। डा. एम. ए. स्टोन महाशय ने भी शारदा लिपि का शारदा देश में उत्पन्न होने और इसकी प्राचीनता का निर्देश किया है।

(२) उत्पत्ति काल

यह निश्चित रूप से कहना कठिन है कि शारदा लिपि का उत्पत्ति काल कौन है? परन्तु इसके प्राचीन या अर्वाचीन शिलालेखों में जो इस का रूप मिलता है वह स्पष्ट रूप से इस बात की पुष्टि करता है कि उन उत्कीर्णलेखों से बहुत समय पहले ही लिपि का उद्गम हुआ होगा। शारदा-लिपि में उपलब्ध शिलालेखों में 'मार्तण्ड' का शिलालेख विस्तृत तथा अतिप्राचीन है। यह महाराजा अवन्तिवर्मा के शासन काल (८५५ ए. डी.) का है। इस शिलालेख की प्रतिलिपि इस पुस्तक के अन्त में दी गई है। लिपि का स्वरूप ही यह प्रकट करता है कि लिपिका आदि रूप कितना पुराना होगा। इसके अतिरिक्त श्री वोगेल (J. Ph. Vogal) महाशय ने अपने 'Antiquities of chamba state' नामक लिपि संग्रह के भाग प्रथम, और भाग द्वितीय में भी शारदा लिपि के कुछ शिलालेखों, पुरातन ताम्रपत्रों और प्रशस्तिपत्रों की प्रतिलिपियां[२] संकलित की हैं। उनमें से तो कई अतिप्राचीन हैं। उनके अस्पष्ट स्वरूप तथा लिपि से अनुमान लगाना कठिन नहीं कि यह लिपि सैकड़ों ही नहीं अपितु सहस्रों वर्ष पूर्व उत्पन्न हुई थी जो अपने विविध परिधानों को बदलती हुई इस रूप को धारण कर अवस्थित हो गई है।

१८ वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में कर्नल बावर (Baver) साहेब को मध्यतुर्किस्तन के पास अतिप्राचीन संस्कृत ग्रन्थों का एक बृहत् भण्डार मिला था। उनमें से कई ग्रन्थों में लिपि काल ईस्वीय दूसरी शताब्दी लगभग माना गया था। इन ग्रन्थों में कई ग्रन्थ शारदा लिपि में

---

१. List of Kashmir Manuscripts pages 88 ff of the Royal Extra Number of the Journal of the Bombay branch of the Royal Asciatic Society Bombay and London 1877.

२. इस पुस्तक की तीसरी शिखा में उनमें कुछ प्रतिलिपियाँ रखी गई हैं।

लिखे गये थे। इनमें 'आयुर्वेद[1] नावनीतकम्' एक ग्रन्थ मुद्रित हुआ था। इन जीर्णपाण्डुलिपियों को (Baver Manuscripts) नाम से जाना जाता है।

'आयुर्वेद-नावनीतकम्' के कर्ता तीन अज्ञात नाम वाले कश्मीरी विद्वान माने गये हैं। इसका निर्देश 'बावर' महाशय ने ही ग्रन्थ की विस्तृत[2] भूमिका में किया है।

सारनाथ (वाराणसी) में जो एक पुरातत्त्व संग्रहालय है। उस में कुछ प्रस्तर[3] खण्डों पर शारदालिपि में कुछ अक्षर उत्कीर्ण है। देखने में यह अतिप्राचीन प्रतीत होते हैं। ब्राह्मी लिपि के अनन्तर गुप्त कालीन वाकाटक लिपि प्रचलित रही। उस के साथ ही एक प्रकार की 'घसीटवार लिपि' (Central Asian Cursive) मध्य एशिया में प्रचलित थी। शारदा लिपि के साथ इसका भी समीपतम सम्बन्ध प्रतीत होता है। गुप्त कालीन वाकाटक लिपि और शारदा लिपि में अत्यन्त भिन्नता[4] लगती ही नहीं।

श्रीनगर के पास 'खुनमोह' नामक एक गांव है। महाकवि बिल्हण का जन्म इसी गांव में हुआ था। यहां एक पुरानो 'बावडी' (वापी) है। इसकी एक दीवार में पुराना सा पत्थर[5] चुना गया है। इस पर कुछ शारदा अक्षरों में उत्कीर्ण एक वाक्य है। अक्षर[6] स्पष्ट हैं। उस शिला खन्ड को तथा उन अक्षरों को देखने से तो मेरी धारणा यह बनी थी कि यह 'शिलालेख' कश्मीर में उपलब्ध सभी लिपि शिलाखण्डों से अत्यन्त प्राचीन है।

---

१. अबदुष्प्राप्य है।
२. 'आयुर्वेद नावनीतकम्'—लाहौर मुद्रित इंग्लिश भूमिका।
३. मैंने इसे १९३६ ई० में देखा जब मैं हिन्दू विश्वविद्यालय (B. H. U.) में पढ़ता था।
४. तृतीयाशिखा में लिपि पत्र २ को देखिये।
५. इसको मैंने अन्तिम बार सन् १९३३ में देखा था।
६. तृतीया शिखा में लिपि पत्र २ देखें।

इस पर जो लिखा है वह संस्कृतप्रधान अपभ्रंशमय कश्मीरी भाषा प्रतीत होती है। जिसमें किसी भयङ्कर दुर्भिक्ष का संभवतः संकेत है। प्राचीन काल में भयङ्कर दुर्भिक्ष महाराजा तुञ्जीन के राज्यकाल में पड़ा था। यदि यह अनुमान यथार्थ हों तो फिर शारदालिपि महाराजा तुञ्जीन के समय में अर्थात् ईसवीयपूर्व प्रथम शताब्दी में ही विकासोन्मुख होने लगी थी क्योंकि महाराजा तुञ्जीन का राज्यकाल राजतरङ्गिणी के अनुसार ई. पू. ८८-११५ वर्ष पर्यन्त था। अतः 'शारदालिपि उससे भी पूर्व प्रचलित रही होगी' वह मानना असंगत नहीं हो सकता।

(२) विकास काल

यद्यपि शारदालिपि का जन्म शारदादेश (कश्मीर) में हुआ, परन्तु यह लिपि पर्वतीय सीमा को पार कर शनैः शनैः भारत के उत्तरीय मैदानी प्रदेशों में प्रचलित होती गई थी, जब इस लिपि की पुत्रियां गुरमुखी टांकरी आदि पंजाब में प्रचलित हो रही थी तब भी यही लिपि सारे पंजाब में मुख्यलिपि रही थी विशेष कर कश्मीर और पंजाब के पर्वतीय प्रदेश-जैसे चम्बा, कांगड़ा, शिमला प्रान्त आदि में यह लिपि प्रधान एवं जनसाधारण के व्यवहार की लिपि थी। और तब तक रही थी जब तक फारसी लिपि राज्याश्रित नहीं थी। इसका प्रमाण ऐतिहासिक विद्वानों का यह कथन है

"Sharada was once extensively used by both in the plains and hills of the Punjab...... This character was remarkably conservative, its forms were by no means so immutable as the both authorities on Indian paleography have supposed."

और भी इससे आगे यही लेखक इसकी व्यापकता का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि—

"An interrupted series of sarda records ranging from the time when this script was evolved out of the western Gupta Alphabet down to the mohamadan period, when it developed into Gurmukhi. Takari and other modern writings."

J. Ph. Vogel's "Antiquities of chamba state" Preface page vi

'प्राचीन लिपिमाला' के पृष्ठ संख्या ७३ में भी उसके विद्वान लेखक ने इस कथन की पुष्टि की है और उस ग्रन्थ में दिए गए प्लेट संख्या Plate NO Lxxvii से भी इस की प्रामाणिकता सिद्ध होती है।

कश्मीर के इतिहास-प्रसिद्ध 'मार्तण्ड मन्दिर' के उत्खनन करते समय वहां के ध्वंसावशेषों में एक सुन्दर शिला पट्टिका पर शारदा अक्षरों में और संस्कृत पद्यों में उत्कीर्ण एक शिलालेख मिला था। वहां यह उत्खनन सन् १९२२ में प्रारम्भ किया गया था। इस शिला-पट्टिका की लम्बाई २ फुट और चौड़ाई करीब डेढ़ फुट है। मैंने इस शिलालेख की प्रतिलिपि सन् १९३० में उतारी थी। इसकी फोटोस्टैट कापी इस पुस्तक में अन्य प्रतिलिपियों के साथ दी गई है। अब तो यह शिलालेख वहां पर सुरक्षित रखा गया है। परन्तु इसकी बहुत सी पंक्तियां और अक्षर मिटाई हुई प्रतीत होती हैं। यह शिलालेख महाराजा अवन्ति वर्मा के शासनकाल (८५५ ई.) का है।

इसमें महाराजा अवन्ति वर्मा के द्वारा मन्दिर में प्रतिदिन यज्ञ एवं पूजा आदि करने की व्यवस्था का वर्णन है। यह शिलालेख सुवाच्य शारदा अक्षरों में लिखा गया है। कश्मीर में अब तक उपलब्ध सभी शिलालेखों से यह सुस्पष्ट एवं प्राचीन है। इसका एक पद्य खण्ड जो मुझे सन् १९३० से ही याद है, इस प्रकार है:—

'दिगन्तव्याप्तश्रोः क्रतुमपि च पूजां प्रतिदिने'

यहां पर यह निर्देश करना अनुचित न होगा कि मार्तण्ड के भग्नावशेषों का संरक्षण[1] केन्द्रीय सरकार ने जब विशेष रूप से करना प्रारम्भ किया था तब तक तो इस शिलालेख की कई पंक्तियां मिटाई गईं थी। यह शिलालेख शारदालिपि की एक गौरवमयी निधि है।

राजतरङ्गिणी में वर्णित कई ऐतिहासिक तथ्यों से यह आभास मिलता है कि इस शारदा लिपि को अत्यन्त शीघ्रता से तथा सर्वत्र ही

---

१. सुनने में आया कि इसको फिर से भी क्षति पहुंचाई है।

सभी वर्गों के लोग लिखते और पढ़ते थे। यही एक राजभाषा के रूप में या लिपि के रूप में व्यवहृत होती थी। उदाहरण के लिये दुर्लभवर्धन और अनङ्गलेखा का प्रेम प्रसंग। महाराजा संग्राम सिंह दुर्लभवर्धन को सचेत करता हुआ जल्दी में सोये हुए दुर्लभवर्धन के दुशाले पर यह पद्य अपने नाखून और रक्त को लेखनी और स्याही के लिये प्रयुक्त कर लिखता है:—

[1]'वध्योपि न हतो यत् त्वं
हेतुस्तस्य विचार्यताम्'

इसी प्रकार महाराजा [2]जपापीड को विदेश में कारावास से मुक्त कराने वाला महामन्त्री सोमशर्मा अपने उष्णीष के एक टुकड़े पर नाखून और रक्त के द्वारा उसके लिये कुछ बातें लिखता है तथा अपने आपको राजा के लिये 'आत्मबलिदान' करता है।

कश्मीर की सुप्रसिद्ध महारानी 'दिद्दा' के राज्यकाल सन् ९८० ई. का एक शिलालेख पंजाब के किसी स्थान पर मिला था। यह शारदा-लिपि में है और लाहौर[3] (पाकिस्तान) के संग्रहालय में मौजूद है।

महारानी दिद्दा के शासनकाल तथा कश्मीर नरपति तोरमाण के शासनकाल (६ठी शताब्दी) के कुछ सिक्के उपलब्ध हुए हैं। इन पर भी अस्पष्ट रूप से शारदा अक्षरों में कुछ उत्कीर्ण किया गया है। ये सिक्के श्रीनगर एवं कलकत्ता के संग्रहालयों में रखे गये हैं। कश्मीर के बाहर महाराजा तोरमाण के सिक्के एवं शिलालेखों के अतिरिक्त तोरमाण की स्वर्ण-मुद्राएं भी पंजाब और समीपवर्ती प्रदेशों में प्राप्त हुए हैं:—

---

१. राजतरङ्गिणी कल्हणकृत तरङ्ग ७।२
२. राजतरङ्गिणी कल्हणकृत तरङ्ग ६
३. डा० रघुनाथसिंह सम्पादित कल्हण राजतरिङ्गणी के हिन्दी अनुवाद तरङ्ग १ पृ. १३ को देखें।

"Toramana......-his coins have been found in large numbers in Kashmir, the Punjab and neighbouring places Rahatpur..." 'Hunas in India' Page 14.

और भी प्रसिद्ध इतिहास विशारद श्री सी. राय महोदय लिखते हैं:—

"The son of this Toramana was Praversen whose coins both in gold and silver of the kedante type have been found."

C. Roy, J N S I
Vol. xviii Page 73

शारदा अक्षरों की प्राचीनता तथा व्यापकता का संकेत भगवान् आदिशंकराचार्य की 'सौन्दर्य-लहरी' के इस पद्य खण्ड से भी मिलता है। पद्य खण्ड यह है :—

'मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो
हरार्धं ध्यायेत् यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम्'

इस में शारदा अक्षर (ईं) के माध्यम से ही निष्कला कामकला का रूप वर्णित है। क्योंकि पहले वाले सबके ऊपर के बिन्दु तोरमाण [६ठी शतीब्दी] का ऐरण प्रतिमा लेख एक प्रकार का विस्तृत अभिलेख है। इसकी लिपि ब्राह्मी और शारदा है। इसकी अन्तिम दो पंक्तियां ही हमने नमूने के तौर पर प्रतिलिपियों के साथ इस ग्रन्थ की तृतीया शिखा में संगृहीत की हैं। कश्मीर के नरपति 'जस्सक' [११८१-१२१९ ई.] के समय की पार्श्वनाथ की कांस्य प्रतिमा पर शारदालिपि के साथ नागरी लिपि भी उत्कीर्ण है। यह कांस्य[1] प्रतिमा श्रीनगर के प्रताप संग्रहालय में सुरक्षित है।

---

१. डा० रघुनाथ सिंह सम्पादित 'जोनराजं तरङ्गिणी' की भूमिका, पृष्ठ ७० देखिये।

काम कला बीज 'ईं'

नागरी = 'ईं'

शारदा = ∴ ᒧ

का चित्रमय विवरण इस प्रकार है:—
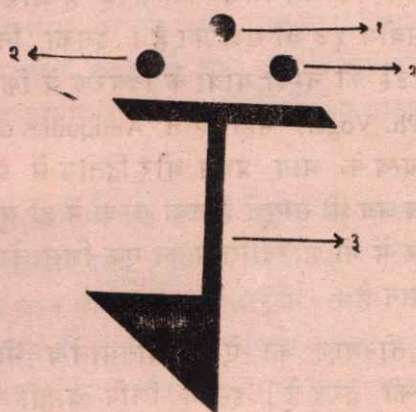
विवरण

१, '·' मुख (भगवती का)
२. '··' दो बिन्दु—दो कुच (स्तन)
३. '∴ᒧ' शरीर (भगवती का)

हर-(दर) का अर्थ-शंकर

हरार्ध-हर (दर) शब्द का आधा-'ह्' के बाद का भाग-र (र) तथा हर (शिव) का देहार्धभाग (पार्वती) में यत्र तत्र वर्णन मिलता है। देखिये—

> **'प्रद्युम्नशिखरासीनां[1]**
> **मातृ-चक्रोपशोभिताम् ।**
> **पीठेश्वरीं शिलारूपाम्,**
> **'शारिकां' प्रणमाम्यहम् ॥'**

महाकवि क्षेमेन्द्र ने अपने पिता का वर्णन करते हुए लिखा है:—

---

१. शारिका सहस्रनाम (अमुद्रित)

'यः[1] श्री स्वयम्भूभवने[2] विचित्रे,
लेप्य-प्रतिष्ठापित मातृचक्रः ।
गो भूमिकृष्णाजिन वेश्मदाता
तत्रैव काले तनुमुत्ससर्ज ॥'

शारदा लिपि में उत्कीर्ण एक अर्वाक्-कालीन शिलालेख 'चम्बा' शहर में है। यह विस्तृत अभिलेख की तरह है और इस की लिपि भी स्पष्ट है। यह ईसवीय १३ वीं सदी का है। इसका निर्देश श्री कनिङ्गम साहब ने सन् १८३९ की चम्बा यात्रा के विवरण में किया है। श्री जे. पी-एच. वोगेल (J.Ph. Vogel) महाशय ने 'Antiquities of Chamba State' नामक संकलन ग्रन्थ के भाग प्रथम और द्वितीय में इसका निर्देश किया है। यह शिलालेख अब भी सम्पूर्ण है तथा चम्बा में ही सुरक्षित है। कांगड़ा के वैद्यनाथ मन्दिर में भी शारदालिपि का एक शिलालेख अब भी सुरक्षित अवस्था में विद्यमान है।

महाराजा तोरमाण का ऐरण प्रतिमालेख भी एक प्रकार से विस्तृत-अभिलेख की तरह है। इसकी लिपि ब्राह्मी और शारदा है। इसकी अन्तिम दो पंक्तियां ही हमने नमूने के तौर पर इस ग्रन्थ की तृतीया-शिखा में इसकी प्रतिलिपि (लिपिपत्र ३) संग्रहीत की है।

कश्मीर के नरपति 'जस्सक' (११९१-१२१९ ई.) के समय की कांस्यप्रतिमा पर शारदालिपि के साथ नागरी लिपि भी उत्कीर्ण है। यह कांस्य[3]-प्रतिमा श्रीनगर के प्रतापसंग्रहालय में सुरक्षित है।

यह एक सर्वसम्मत ऐतिहासिक तथ्य है कि प्राचीन समय में भारत के केरल, कोंकण, आन्ध्र आदि दूरस्थ भागों से विद्यार्थी विद्याध्ययन के लिये कश्मीर आते थे। महाकवि क्षेमेन्द्र के 'देशोपदेश'[4] नामक लघुकाव्य

---

१. औचित्य विचारचर्चा

२. 'स्वयम्भू' नामक प्रसिद्धतीर्थ अब 'सुयम' कहलाता है। यह गांव ताराभूला जनपद में है।

३. डां० रघुनाथसिंह सम्पादित 'जोनराजतरङ्गिणी' की भूमिका, पृष्ट ७०

४. कश्मीर, श्री नगर के रिसर्चविभाग केद्वारा 'देशोपदेशनर्ममाला' ग्रन्थौ' नाम से प्रकाशित'

में इसका विशदरूप से वर्णन मिलता है। यहां यह मानना तर्कसंगत तथा स्वाभाविक होगा कि इन की शिक्षा का माध्यम भाषा के रूप में संस्कृत तथा लिपि के रूप में शारदा ही होता था। ये छात्र शारदालिपि में लिखे गये ग्रन्थ पढ़ते थे और विद्यासमाप्ति पर अपने साथ इस लिपि की ज्ञान सामग्री भी उन-उन प्रान्तों में ले जाते थे। यह भी स्वाभाविक बात है कि ये विद्यार्थी अपने देशों से ही लिपि सीख कर आते थे और उन उन प्रान्तों में ऐसे विद्यालय या मठ अवश्य थे जहां शारदावर्णों का ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था रखी गई थी। इस से यह मत भी पुष्ट होता है कि भारत के अन्य प्रान्तों में भी शारदालिपि का पाठन और पठन होता था।

उस प्राचीन काल में जब सम्पर्क करने का माध्यम और यातायात के साधन भी आज की तरह नहीं थे, भाषा और लिपि का सामञ्जस्य अत्यन्त आवश्यक था। अतः यह अवधारणा स्वतः जागृत होती है कि शारदा लिपि अवश्य ही भारत के दूर प्रान्तों में भी प्रचलित रही होगी। यद्यपि 'सौन्दर्य लहरी' के पूर्वनिर्दिष्ट 'मुखं बिन्दुं कृत्वा' इस पद्य से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान् शंकराचार्य ने 'ईं' इस बीजरूप काम-कला अक्षर का जो वर्णन किया है वह शारदा का '𑆆' [ईं] ही है और केरल जैसे कश्मीर से अति दूरस्थ भारत के दक्षिणीय भाग तक 'शारदा' लिपि अवश्य किसी न किसी रूप से प्रचलित रही थी। इसका समर्थन यहां पर हम एक और प्रमाण देकर करेंगे—

महाकवि 'मंख' का साहित्यमीमांसा नामक एक ग्रन्थ है। इसे 'भासनाटकचक्र' के अन्वेषक और प्रकाशक स्व. श्री गणपति शास्त्री ने 'तैञ्जोर' के एक पुस्तकालय से प्राप्त कर प्रकाशित किया था। उस का लिपिकाल १३ वीं शताब्दी का पूर्वार्ध माना गया था। ग्रन्थ के रचयिता महाकवि मंख महाराजा जयसिंह (इ. ११४८) के समय में थे। ग्रन्थ मूल रूप से शारदा लिपि में लिखा गया होगा और उसी को आदर्श पुस्तक बना कर उसकी प्रतिलिपि की गई होगी। इस ग्रन्थ[1] के प्राक्कथन

---

१. यह ग्रन्थ मैंने श्रीनगर के 'शारदापीठ महाविद्यालय' के पुस्तकालय में १९५८ में देखा था। अब तो यह ग्रन्थ 'दुष्प्राप्य सा हो गया है।

[Preface] में विद्वान संस्कर्ता ने यह विवरण दिया है। शारदालिपि कश्मीर में एकमात्र राजकीय लिपि रही थी। यह मत यहां पर हम 'राजतरङ्गिणी' में वर्णित एक ऐतिहासिक प्रमाण से पुष्ट करते हैं।

महाराजा यशस्करदेव [ईसवीय ६३६] के शासनकाल की एक घटना है :—

एक आदमी जो ऋणग्रस्त हो गया था धनोपार्जन के लिये विदेश जाता है और अपनी भूसम्पत्ति एक बनिये को बेचता है। किन्तु अपनी पत्नी के गुजारे के लिये केवल एक 'सोपान-कूप' रखता है जो उसी भूखण्ड में था। वह अभिलेख में 'सोपान कूप रहितम्' भूखण्ड को बेचा गया, ऐसा लिखवाता है। कुछ वर्षों के बाद जब वह स्वदेश लौट कर आता है तो अपनी पत्नी को दयनीय स्थिति में पाता है और 'सोपानकूप' को बनिये के कब्जे में पाता है। वह महाराजा के पास फरियाद करता है। महाराजा को पता चलता है कि उस अभिलेख में बनिये ने 𑆫 (र) को '𑆱' (स) में किसी लेखकार (कातिब) को दस हजार दीनार देकर बदलकर लिखवाया था। शारदालिपि के 𑆫 (र) को 𑆱 (स) में परिवर्तित करना सुकर ही था। शारदा लिपि राजलिपि और जनसाधारण की भी एकमात्र व्यावहारिक कामकाजों की लिपि थी।

सम्राट् विक्रमादित्य [सम्वत्-प्रवंतक] के प्रतिनिधि के रूप में जब महाकवि मातृगुप्त कश्मीर के राज्य सिंहासन पर आसीन होता है तो उस के बाद महाकवि भर्तृमेण्ठ अपना नव विरचित 'हयग्रीववध' महाराजा को भेंट करता है। मातृगुप्त स्वयं उसको पढ़ता है और उसकी काव्यकला के आस्वादन में इतना रसलीन हो जाता है कि सम्पूर्ण काव्य समाप्त करने के अनन्तर ही कवि को साधुवाद प्रदान करता है:—

'हयग्रीव वधं मेण्ठस्तदग्रे दर्शयन् नवम्।
आसमाप्ति ततो नापत् साधु साध्विति यो वचः॥'

[रा० त० १ त० ३ श्लो २७०]

इस ऐतिहासिक वर्णन से इस कथन की पुष्टि होती है कि मातृगुप्त कवि कश्मीर में राज्य सत्ता सम्भालने के पूर्व शारदा लिपि जानता था।

यह लिपि पारस्परिक विचारों के आदान-प्रदान करने के स्तर तक उपयुक्त बन गई थी।

यद्यपि शिलालेखों, अभिलेखों और उपलब्ध प्राचीन मुद्रा एवं ग्रन्थों से यह स्पष्ट है कि शारदा लिपि का रूप तथा प्रचार विक्रम पूर्व २०० वर्षों से विक्रमीय १६ वीं शताब्दी तक अक्षुण्ण रहा और यह लिपि शिक्षा के एक मुख्य माध्यम के रूप में मान्य हो गई थी, तथापि यहां पर हम कुछ और भी ऐतिहासिक प्रमाणों से इस पर अधिक प्रकाश डालते हैं। 'कुट्टनीमतम्' में कश्मीरी महाकवि दामोदरगुप्त वाराणसी के वर्णन प्रसंग में

'छन्दः प्रस्तार विधौ गुरवो यस्यामनार्जव स्थितयः'

इस श्लिष्टार्थ से गुरुजनों और 'गुरु' वर्णों का वर्णन किया है। आज भी छन्दः शिक्षा में गुरुवर्ण टेढ़ा 'ऽ' की तरह लिखा जाता है।

कश्मीर के बादशाह सिकन्दर जिस का शासनकाल सन् १३८७ ई. में प्रारम्भ हुआ था और जिसे 'सिकन्दर बुतशिकन' (मूर्तिभञ्जक) के नाम से कश्मीर में जाना जाता है, जब परिहासपुर के गगनचुम्बी 'परिहास-केशव' को धूलिसात् करता गया तो मन्दिर के एक स्तम्भ से एक सन्दूक में रखा हुआ एक ताम्रपत्र मिला जिस पर लिखा था कि महाराजा ललितादित्य ने इस मन्दिर का निर्माण करने के बाद ज्यौतिषियों से पूछा कि क्या इस अति विशाल देवालय का भी कभी ध्वंस होगा। वहां एक ज्यौतिषी ने यह भविष्यवाणी की—"आज से ११ सौ वर्षों के बाद सिकन्दर नामक कश्मीर का शासक इसको नष्ट करेगा।" सम्राट् ने इस कथन को ताम्रपत्र[२] पर अंकित करवा के सन्दूक में रखवा दिया। उस समय बादशाह के साथ 'सूहभट्ट' भी था। सभी इस पर चकित हो गये।

---

१. 'परिसपोर' के नाम से प्रसद्धि गाँव श्रीनगर से लगभग ३० मील दूर पश्चिम में वितस्ता के तट के पास अवस्थित है। महाकवि कल्हण यहीं का रहने वाला था।

२. जनराजकृत राजतरङ्गिणी, डा० रघुनाथ सिंह सम्पादित पृष्ठ ३८६ तथा फ़िरिश्ता लिखित 'तबकाते अकबरी'।

यहां पर इस तथ्य के निर्देश करने से यह दिखाना है कि ललितादित्य से सिकन्दर बादशाह तक लगभग ८०० वर्षों तक भी लिपि का ज्ञान और प्रचार यथावत् रहा।

दूसरा ऐतिहासिक तथ्य इसी बादशाह के समय की कथा है। जब बादशाह विजये[1]श्वर में एक विशाल मन्दिर को धराशायी कर चुका था तो वहां पर भी मन्दिर की गहरी नींव में एक सन्दूक मिला। इस को खोल दिया गया और इसमें भी एक ताम्रपत्र मिला जिसको बादशाह के सामने ही पढ़ा गया।

मन्दिर का निर्माण अशोक ने कराया था। इस मन्दिर का विध्वंस 'बिस्मिला' यह मन्त्र पढ़ने वाले करेंगे। यह एक पद्य के रूप में ताम्रपत्र पर लिखा हुआ था :

'बिस्सिमिलेति[2] मन्त्रेण
नश्यन्ति विजयेश्वराः।'

अशोक के समय से लेकर १४ वीं सदी तक शारदा लिपि को बराबर लिखने पढ़ने को व्यवहार में लाया जाता था। यह ब्राह्मी लिपि में नहीं रहा होगा क्योंकि इस काल तक कश्मीर में ब्राह्मी लिपि का ज्ञान किसी को था ऐसी सम्भावना नहीं है। दूसरी बात यह भी है कि ब्राह्मीलिपि का कश्मीर में अधिक प्रचार नहीं था और न इस लिपि का अभी तक वहां कोई शिलालेख या अभिलेख मिला है। जब ब्राह्मी लिपि अधिक प्रचलित भी रही तब भी कश्मीर में शारदा ही मुख्य लिपि रही होगी, जिस का प्रबल प्रमाण यह ताम्रपत्र ही हो सकता है जिसको उस विध्वंस काल में भी लोगों ने पढ़ा। चौथी बौद्ध महा[3]समिति कश्मीर के कुण्डल-वन-विहार में बनी थी और इसने बौद्धधर्म के सिद्धान्तों में परिवर्तन कर 'एक विभाषाशास्त्र' बनाकर उसे ताम्रपत्रों में उत्कीर्ण कराया था और इसको

---

१. कश्मीर में प्रसिद्ध एक कस्बा।

२. 'जोनराजकृत राजतरङ्गिणी' डॉ० रघुनाथ सिंह सम्पादित पृष्ठ ३६२ तथा परिहसन कृत 'तवारीखे कश्मीर' पृष्ठ २७६

३. यह सभा सम्राट् कनिष्क के [ईस्वीय प्रथम शताब्दी मध्यकाल] में हुई थी। इसे IV Budhist Council के नाम से जाना जाता है।
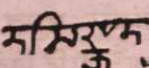
एक स्तूप[१] में वहीं स्थापित कराया गया था। यदि अतीत के गम्भीर गर्भ में विलीन इन पत्रों को समय के प्रवाह ने कथञ्चन सुरक्षित रखा हो और इनको पाया जाए तो न केवल शारदा लिपि के विषय में बल्कि इतिहास की दिशा में भी बहुत सी सन्दिग्ध बातों की भी निश्चित धारणा बन जाए।

'काव्य प्रकाश' में आचार्य मम्मट, जो कि कश्मीरी थे, ने एक काव्यदोष (अश्लील) माना है और संस्कृत साहित्य के विश्वनाथ आदि आलंकारिकों ने भी इस दोष को मानते हुए मम्मटाचार्य के दिये गये इस दोष के उदाहरण—

'ततोऽत्रैव रुचिङ्कुरु'

इस पद्य में 'चिङ्कु' को कश्मीरी भाषा में अश्लील माना है। शारदा लिपि में जैसा कि आगे के प्रकरणों में वर्णन करेंगे 'भिन्न भिन्न पदों को भी संयुक्त रूप में लिखा जाता है।' अत एव

'रुचि कुरु' को

रुचिङ्कुरु ([illegible]) इस प्रकार लिखने में उच्चारण के समकाल ही 'चिङ्कु'[२] अश्लील सा लगता है। यह परिपाटी शारदा लिपि में प्राय: देखी जाती है नागरी लिपि में नहीं।

इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शारदा लिपि का और कश्मीरी भाषा का ज्ञान प्राय: शिक्षित वर्ग में अवश्य ही रहा होगा।

पण्डित नरहरि ने जो एक प्रसिद्ध वैद्य भी रहे थे और भगवान सोमानन्द पाद के वंशज थे दसवीं शताब्दी ईसवीय के उत्तरार्ध में एक

---

१. Studies of Kashmir Council of Researches Page 4 Vol. 5 (Walters Thomas, 'Yuan Chawangs Travels in India' Pages 271-273)

२. यह शब्द अब भी कश्मीरी भाषा में अश्लील है। टीकाकारों ने भी 'चिङ्कु' (योन्यन्तर्वर्ति कन्द विशेष:) कहकर 'कश्मीर भाषायामश्लीलवाचक:' ऐसा लिखा है। चिङ्कु (Anatomical name—'Clitoris')

'राजनिघण्टु' नामक आयुर्वेद ग्रन्थ लिखा है जिसमें औषधियों के नाम और गुणों का परिचय दिया है। ये लिखते हैं:—

'व्यक्तिः कृतात्र कार्णाट-
महाराष्ट्रीय भाषया।
आन्ध्र लाटादि भाषास्तु
ज्ञातव्यास्तद् व्यपाश्रयाः[1] ॥'

इससे यह प्रमाणित होता है कि उस समय के विद्वान प्रायः अन्य प्रान्तों की भी लिपि एवं भाषा के ज्ञाता होते थे। इससे यह कहना असंगत न होगा कि शारदा लिपि का ज्ञान उन दिनों शिक्षित होने का एक प्रधान मापदण्ड माना जाता था। जैसे आजकल अंग्रेजी का जानना माना जाता है।

महाकवि मंख ने 'श्रीकण्ठ चरितम्' काव्य में एक पण्डित[2] सभा का वर्णन किया है। इसमें देश (कश्मीर) और भारत के अन्य भागों के भी कई विद्वान् रहते थे। महाकवि मंख ने अपने काव्य को इन्हीं पण्डितों के समक्ष परीक्षण के लिये रखा। इसमें अलंकार शास्त्र के विद्वान 'रुय्यक' राजतरङ्गिणी के रचयिता महाकवि कल्हण[3] आदि विद्वान् थे। कान्यकुब्ज नरेश गोविन्दचन्द्र[4] का दूत भी उपस्थित था। इसी सभा के विद्वद्वर्ग से सम्मानित होने के उपरान्त महाराजा जयसिंह ने मंख को एक नवनिर्मित 'मठ' का 'प्रष्ठ' (प्रधानाचार्य) नियुक्त किया।

'स मठस्याभवत् प्रष्ठः
'श्रीकण्ठस्य प्रतिष्ठया।' (रा. त. ८ तरंग)

---

१. 'राज निघण्टु' सर्ग प्रथम श्लोक १८।

२. श्रीकण्ठचरितम् जोनराज कृत टीका सहित सर्ग २५ वां निर्णय सागरप्रेस से मुद्रित

३. मंख ने 'इतिहास विदां श्रेष्ठं कल्याणं तमवन्दत' इस पद्य में कल्हण को कल्याण नाम से निर्दिष्ट किया है।

४. 'दूतो गोविन्दचन्द्रस्य कान्यकुब्जस्य भूपतेः'

श्रीकण्ठचरित सर्ग २५ वां

कहने का अभिप्राय यह है कि शारदा लिपि को सभी विद्वान् प्रायः जानते थे। क्योंकि लिपि का सार्वत्रिक[1] ज्ञान रचनाओं, सभाओं और अन्य वैचारिक गोष्ठी एवं आदान-प्रदान कार्यों के लिये एक मूलभूत तथा अनिवार्य अंग होता है, उस काल में भारत के उत्तरीय भाग में शारदा लिपि का अधिक प्रचलन था और इसके साथ 'वाकाटक लिपि' भी प्रचलित थी। शनैः शनैः नागरी लिपि भी उत्तरवर्ती काल में प्रचलित होने लगी। शेष लिपियां केवल अपने-अपने क्षेत्रों तक ही सीमित रही थी, वह भी गौणरूप से ही।

२. शारदा-लिपि का अविच्छिन्न प्रचार और प्रयोग

पूर्व वर्णित ऐतिहासिक प्रमाणों से यह हम निःसंकोच कह सकते हैं कि शारदा लिपि कश्मीर और इसके समीपवर्ती प्रदेशों में निरन्तर और अविच्छिन्न रूप से प्रचलित एकमात्र मुख्य और जन साधारण की लिपि रही थी और इसका यह उज्ज्वल समय कम से कम १८०० वर्षों का, अर्थात् ईसवीय पूर्व दूसरी शताब्दी से ईसवीय १६वीं शताब्दी तक रहा। इस तथ्य को मान्यता के सुदृढ़ आसन पर आसीन कराने के लिए हम इतिहास के मनोवैज्ञानिक तथ्यों की और विस्तार से विवेचना करेंगे। महाकवि कल्हण पण्डित ने राजतरङ्गिणी की रचना महाराजा जयसिंह के शासन काल सन् ११२८-११५० ई० में की थी। उस ने अपने पूर्ववर्ती विद्वानों के द्वारा लिखे गए इतिहास ग्रन्थों को पढ़ा था। इनका उसने स्वयं इस प्रकार निर्देश किया है—

'दृग्गोचरं पूर्व सूरि ग्रन्था राजकथाश्रयाः।
मम त्वेकादश गता मतं नीलमुनेरपि॥'

[रा० त० त० १ श्लो० १४]

अर्थात् नीलमुनि रचित 'नीलमतपुराण' के अतिरिक्त मैंने ११ इतिहासग्रन्थों को देखा। ये इतिहासग्रन्थ प्रणेता थे—

---

१. महाकवि मंख ने जिस लिपि में अपना काव्य लिखा वह उस की अभ्यस्त लिपि 'शारदा लिपि' ही थी जिसको कश्मीर तथा अन्य प्रान्तों के वहां उपस्थित विद्वान भी अवश्य जानते थे।

सुव्रत, क्षेमेन्द्र, पद्ममिहिर, हेलाराज छविल्लकर, आदि। ये सब ग्रन्थ पण्डित कल्हण से पहले लिखे गए थे और निःसन्देह उसी लिपि में थे जो कल्हण के समय प्रचलित थी और जिसको कल्हण भी जानता था और वह लिपि 'शारदा' ही रही थी। कल्हण के निर्दिष्ट पूर्ववर्ती विद्वानों में 'हेलाराज' नाम का विद्वान था। उस ने भर्तृहरि रचित 'वाक्य पदीय' पर विवृति[1] लिखी है जिस से उसका २ से ३ शताब्दी ई० में होना सिद्ध होता है। अत एव यह कहना युक्तियुक्त होगा कि कल्हण से पूर्व 'लगभग आठ सौ वर्ष उत्पन्न हुए 'हेलाराज' के समय भी शारदा लिपि पूर्ण विकसित तथा प्रचलित रही थी।

कल्हण ने कश्मीर के ५२ नरेशों का इतिहास नहीं लिखा है क्योंकि उनका इतिहास उस समय नहीं मिला था। कल्हण के बाद जैनोल्लाबदीन बादशाह के समय में 'राजरत्नाकर'[2] नामक एक ग्रन्थ उपलब्ध हुआ था। यह कल्हण से ६०० वर्ष पूर्व लिखा गया था। इसको उस समय फारसी में अनूदित कराया गया था। यह ग्रन्थ भी शारदा लिपि में था तभी तो अनुवाद किया गया था। यह ग्रन्थ मूलरूप से डॉ० स्टीन साहेव को भी नहीं मिला था और इसका फारसी अनुवाद भी सुलभ नहीं था।

वे ग्रन्थ जो कल्हण ने पढ़े थे शारदा लिपि में थे जिस का जन साधारण में भी प्रचार था। इस के अतिरिक्त यदि ग्रन्थों को पढ़ने में कुछ भ्रम भी रहा होगा वह भ्रम या संशय किस आधार पर दूर किया गया? इस का उत्तर श्री कल्हण से ही सुनिए—

'दृष्टैश्च पूर्व भूभर्तृ प्रतिष्ठा वस्तु शासनैः।
प्रशस्ति पट्टैः शास्त्रैश्च शान्तोऽशेष भ्रमक्लमः॥

[राजत० त० १ श्लो० १५]

१. व्याकरण का प्रसिद्ध ग्रन्थ जो मुद्रित है और पढ़ाया भी जाता है।

२. इस प्रकार एक लेख 'कश्मीर के ५२ अज्ञात राजा' इस शोर्षक के अन्तर्गत श्री सन्तराम बी. ए. ने लिखा था। मुझे उसके पत्र १९३२ में किसी मित्र से पढ़ने को मिले थे। 'माधुरी' पत्रिका १९२८ अगस्त में यह लेख दिया गया था जो उस समय लखनऊ से प्रकाशित होती थी। अब तो 'तवारीखे हसन' मुद्रित की गई है जिस में उन राजाओं का भी वर्णन है।

कल्हण पण्डित ने तो मन्दिरों, मठों, अभिलेखों, राजप्रासादों और घोषणापत्रों एवं अन्य शिलालेखों आदि को भी जगह-जगह जाकर देखा, निरीक्षण किया और पढ़ कर सब की सामग्री के आधार पर अपने भ्रम, मतभेद या सन्देह को दूर कर ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया। इन सब निर्देशों एवं तथ्यों से अपने प्रकरण का अनुसरण करते हुए हम दृढ़ धारणा से यह मानते हैं कि उस सारे वास्तुकला भण्डार अभिलेख और शिलालेखों आदि में शारदा लिपि उत्कीर्ण थी और लिपि का सम्पूर्ण चित्रण 'शारदा' में था। इस प्रकार की सामग्री से अब जीर्ण ग्रन्थ शिलालेख पूर्ण या खण्डित रूप में प्राप्त हो गए हैं। इन सब से शारदा लिपि का अत्यधिक प्रचार और प्रसार प्रमाणित होता है।

अन्त में यह कहना उचित होगा कि 'शारदा लिपि' की यह तरङ्गिणी अपने उद्गम से लेकर दूर दूर तक प्रवाहित हो रही थी और कई कुल्या और प्रणालिकाओं को जन्म देकर अब स्वयं तिरोहित होती जा रही है।

३. शारदा लिपि की सहोदरा नागरी लिपि

नागरी लिपि तथा शारदा लिपि में बहुत साम्य है। कई वर्ण तो एक से ही हैं, जैसे य, र, ल, व, यहां शारदा में लिखे जाने वाले र (ᚱ) में थोड़ा भेद हे। उ, ऊ, ग और क भी प्राय: एक से हैं। जो इनके अतिरिक्त अन्य व्यञ्जन है उनमें भी कुछेक को छोड़ कर अधिक भेद नहीं लगता। इस से यह मानना युवित संगत प्रतीत होता है कि शारदा और देवनागरी या तो मूल रूप से एक ही हैं और दो भिन्न भिन्न स्थानों में प्रचलित होने के कारण कुछ परिवर्तित रूप में चलती आ रही है।

जैसे वर्तमान समय में भारत में महाराष्ट्र और गुजरात की लिपियां हैं। अथवा इनका प्रारम्भिक रूप ही ऐसा रहा हो। वास्तव में यह सहोदरा लिपियां ही प्रतीत होती हैं और इनका महान अन्तर केवल इन के संयुक्त रूपों में पड़ता है। सर जार्ज ग्रीयर्सन इस विषय में लिखते हैं कि—

शारदालिपि—

"...... it is allied to Nagari, being built on the same system

and corresponding with it letter for letter, but forms of the letters differ greatly"

'Linguistic Survey of India' Vol. VIII Part II Page 254

डॉ० स्टीन महाशय भी लिखते हैं कि—

'It may be useful to mention here that the vocal signs raised above the lines...represent the exceptionally short so called broken vowels sounds peculiar to Kashmiris'

Raj Tarangini (Stien) Preface xxv.

देवनागरी लिपि का कश्मीर में प्रवेश ईसवीय १२वीं शताब्दी में होने लगा था। परन्तु इस लिपि में ग्रन्थ लिखने का क्रम १६वीं शताब्दी के अनन्तर ही प्रारम्भ हुआ था। महाकवि बिल्हण जब महाराजा कलशक के शासन काल [नवीं शताब्दी के उत्तरार्ध] में कश्मीरसे बाहर निकला था उस समय उसने कश्मीर में ही सारा पाण्डित्य प्राप्त किया था, जिस का कवि ने स्वयं संकेत किया है—

'देशात्तस्मादतुल विभवात् शास्त्र[1] सारं गृहीत्वा'

इस समय बिल्हण की आयु १८ से कम ही थी। उस को कर्णाटक तक कहीं भी लिपि को कठिनता नहीं आई थी। उस ने जालन्धर, कुरुक्षेत्र, कन्नौज, मथुरा आदि कई विद्या केन्द्रों में शास्त्रार्थ कर [2]प्रशस्तियां प्राप्त की थी। कवि ने स्वयं अपने जीवन का कुछ परिचय अपने काव्य के अन्तिम सर्ग में दिया है। इस सन्दर्भ में हमें यहां यह सिद्ध करने के लिए प्रामाणिक पुष्टि मिलती है कि बिल्हण का अध्ययन शारदा लिपि के माध्यम से ही हुआ था और कश्मीर से बाहर कर्णाटक तक इस लिपि को कहीं मुख्य और कहीं गौण रूप से अवश्य प्रचलित पाया था। महाकवि कल्हण ने राजतरङ्गिणी[3] में बिल्हण का विदेशों में ख्याति प्राप्त करने का उल्लेख किया है।

---

१. "विक्रमाङ्क देवचरितम्" सर्ग १८।

२. इसके लिये विक्रमाङ्क देवचरितं का १८ वां सर्ग द्रष्टव्य है।

३. 'कश्मीरेभ्यो विनिर्यातं राज्ये कलशभूपतेः।
विद्यापतिं यं कार्णाट श्चक्रे पर्माडि भूपतिः ॥' (रा. त. त. ७)

४. शारदा और गुरुमुखी लिपि

गुरुमुखी लिपि का जन्म शारदा लिपि से हुआ है। यह लिपि शारदा लिपि की 'ज्येष्ठ पुत्री' की तरह है। इस को सभी भाषा एवं लिपि विशारदों ने निर्विवाद रूप से स्वीकार किया है। 'प्राचीन लिपिमाला' के विख्यात लेखक श्री० ओझा महोदय कहते हैं—

'गुरुमुखी……इसके अधिकतर अक्षर उस समय की शारदा लिपि से ही लिए गए हैं। क्योंकि उ, ऋ, ओ, घ, च, छ, ट, ड़, ढ़, त, थ, द, ध, प, फ, ब, भ, म, य, श, ष, और स अक्षर अब तक वर्तमान शारदा से मिलते हैं"

(प्राचीन लिपिमाला पृष्ठ १३० नवीन संस्करण, लिपिपत्र ७७)

शारदा-लिपि के साथ गुरुमुखी वर्णों की इतनी समानता है कि विज्ञ व्यक्ति भी शारदा में लिखे गए पुस्तक, पत्र या लेख आदि को दूर से देख कर गुरुमुखी समझता है।

कश्मीर के प्राचीन वयोवृद्ध पण्डितों से मैंने यह सुना है कि गुरुमुखी लिपि को शारदा लिपि से थोड़ा परिवर्तित एक नई लिपि का रूप देने में कश्मीरी पण्डितों का विशेष कर 'त्राल'[१] के ब्राह्मणों का योगदान रहा है। त्राल के ब्राह्मणों के पास श्री ग्रन्थ साहब और अन्य गुरुमुखी ग्रन्थ अब तक भी रहते थे।

हमने श्रीनगर में अपने गुरुजनों से यह कई बार सुना है कि कश्मीर के प्राचीन पण्डितों ने इन अक्षरों का शारदा अक्षरों से थोड़ा परिवर्तित कर के निर्माण किया था।

मैंने अपने ग्राम मार्तण्ड के एक बहुश्रुत और वयोवृद्ध पण्डित श्री रामचन्द्र शास्त्री[२] से भी सुना है कि 'त्राल' के ब्राह्मणों ने शारदा अक्षरों

---

१. कश्मीर के अवन्तीपुर के समीप प्रसिद्ध स्थान। इस प्रदेश के पास सिखों की भी बड़ी बस्ती है।

१. ये शास्त्र चर्चा करने वाले और ऐतिहासिक कथाओं के ज्ञाता एक सहृदय व्यक्ति थे। ये ८८ वर्ष की आयु में गत वर्ष स्वर्गवासी हो गये।

का कुछ स्वरूप परिवर्तन कर के गुरुमुखी लिपि की रचना की थी। यहां के सभी ब्राह्मण प्रायः पूज्य गुरुओं के सम्पर्क में राज दरबारों में सभा-पण्डितों की तरह उनके साथ रहते थे और ज्यौतिष आदि विषयों में उन को अपनो सम्मति देते थे ।

गुरुमुखी लिपि देवनागरी लिपि की तरह कश्मीर में प्रविष्ट नहीं हुई अपितु कश्मीर में उत्पन्न होकर 'दत्तक' पुत्री की तरह पंजाब में भेजी गई थी।

'त्राल' के ब्राह्मणों को अब भी सिख श्रद्धा से पूजते हैं। शारदा से गुरुमुखी रूप में एक पृथक लिपि निर्माण करने का मुख्य कारण प्रारम्भ में राजनैतिक रहा होगा क्योंकि शारदा लिपि में गुप्त सूचनायें देने में कुछ रहस्योद्घाटन के होने का खतरा था क्योंकि उस समय शारदा लिपि से पढ़े लिखे लोग अपरिचित नहीं थे। अतः एक गुप्त लिपि की आवश्यकता प्रतीत हो गई और इस लिपि की रचना हुई। पूज्य गुरुओं ने जो कि उस समय हिन्दू जनता के एकमात्र नेता, शरण देने वाले तथा उपदेशक थे—इस लिपि को व्यवहार में लाना प्रारम्भ किया और धार्मिक अभिभाषणों एवं अभिलेखों में भी इस का व्यवहार किया तो इसकी प्रसिद्धि 'गुरुमुखी'[1] (गुरुओं के श्रीमुख से पढ़ी जाने वाली) नाम से होने लगी।

'उर्दू' लिपि का जन्म भी मुगलकाल में ऐसी ही परिस्थितियों में हुआ था, इसीलिए इसका नाम 'उर्दू' पड़ा क्योंकि उर्दू[2] लश्कर को कहते हैं।

महाभारत में भी ऐसी एक गुप्तलिपि का निर्देश है। विदुर ने पाण्डवों को इसी लिपि में एक गुप्त पत्र लिख कर उन्हें वारणावत में बनाए गए लाक्षागृह से बच कर निकलने की युक्ति बताई थी।

इसी लिपि के माध्यम से सावधान होकर पाण्डव लाक्षागृह में भस्मसात् होने से बच गए थे ।

---

१. गुरुओं के श्रीमुख से बोली गई अथवा उनके द्वारा सिखाई गई ।

२. यह शब्द अरबी भाषा का 'तत्सम' या तद्भव' शब्द है ।

पाश्चात्य लिपि विज्ञान तथा भाषा-शास्त्रियों ने भी गुरुमुखी का उद्‌भव शारदा लिपि से माना है। इन में सर जार्ज ग्रीयर्सन तथा वोगेल महाशय मुख्य हैं। श्री वोगेल साहेब लिखते हैं कि—

"Sarada was once extensively used both in the plains and hills of the Punjab......it developed into Gurmukhi, Takari and other modern writings."

J. Ph. Vogel,

'Antiquities of Chamba State' Preface Page No. ii (1910 A. D.)

इसके अतिरिक्त भारतीय अनुसन्धान कर्ता तथा इतिहास[1] वेत्ताओं की भी प्रायः यही धारणा रही है।

५. टाकरी लिपि

यह लिपि भी शारदा लिपि को ही कुछ तोड़ मरोड़ कर बनाई गई है। इस को भी शारदा लिपि की पुत्री ही कह सकते हैं। इस का जन्म १४वीं, १५वीं शताब्दी में हुआ है ऐसा अनुमान है। इस लिपि का प्रचार जम्मू, कांगड़ा, एवं तराई वाले प्रदेशों में अधिक रहा और अब भी दृष्टिगोचर होता है। इस के कुछ अतिप्राचीन हस्त लिखित[2] ग्रन्थ भी उपलब्ध हुए हैं।

---

१. " सिखों का परिवर्तन" लाहौर में 'पिण्डीदास-पुस्तक भण्डार' द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित (सन् १९२८)

२. हमारे पास एक जीर्ण शीर्ण ग्रन्थ था। इसमें टाकरी, शारदा, गुरुमुखी और नागरी लिपि में लिखे गये विविध विषयों के पत्र थे। यह मैंने सन् १९५३ में पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़ भेज दिया था। पत्र पुराने कश्मीरी कागज के थे और पीले हो गये थे। इनमें चक्र, और तन्त्रमन्त्र प्रक्रियाएँ थी। एक काक भाषा विषयक शकुनशास्त्र भी था। यह सब मैंने सुरक्षित होने के लिये अपने एक मित्र प्रो. हंसराज अग्गर वाल (चण्डीगढ़) को यूनिवर्सिटी को देने के लिये भेज दिये थे। उनमें एक पत्र पर विक्रमी सम्वत् १५३५ लिखा था परन्तु कुछ पत्र इससे भी पुराने रहे होंगे।

१५वीं शताब्दी के बाद जब कि शारदा लिपि का प्रचार क्षेत्र संकुचित होने लगा तब पर्वतीय भागों में इसका विस्तार होने लगा था। सर जार्ज ग्रियर्सन तथा 'प्राचीन लिपिमाला' के विद्वान् लेखक ने भी शारदा लिपि से ही टाकरी लिपि का उद्भव माना है। देखिए—

'Linguistic Survey of India'

Vol. viii Part II Page 257-58 (New Print)

और 'प्राचीन लिपि माला' (पृष्ठ १३०-१४०)

लिपि का स्वरूप, शैली और विशेष कर मात्राओं का विन्यास ही परिवर्तित प्रतीत होता है। मूल रूप तो शारदा लिपि से अभिन्न है।

६. शारदा और डोगरी लिपि

डोगरी लिपि का उद्भव भी 'शारदा' से हुआ है। इस के अक्षर शारदा लिपि से बहुत साम्य रखते हैं। अ, द, प, त, र, म ह तो एक से ही हैं। इस में कुछ वर्ण बिल्कुल पृथक् से ही प्रतीत होते हैं। इसके अक्षरों की मात्राएें लम्बी होती हैं जिसके कारण यह अपने ढंग की भिन्न सी लिपि ही दिखाई देती है। इस लिपि के माध्यम से क वाक्य यहां प्रस्तुत करते हैं।

डोगरी में

(Linguistic Survey of India Vol IX Part I Page 760)

शारदा में

नागरी में

एक आदमी के दो पुत्र थे

अक्षरों की समानता शारदा अक्षरों के साथ कितनी लगती है? पाठक स्वयं देख सकते हैं।

यह लिपि डोगर (द्विर्गत) प्रदेश अर्थात् जम्मू प्रान्त और उसके समीपवर्ती भागों में अब भी प्रचलित है। इसका उद्भवकाल—संभवतः ईसवीय १५ वीं सदी के लगभग रहा होगा। इस लिपि का भी अपना साहित्य है। परन्तु इसमें मुद्रित आज तक कोई ग्रन्थ दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

७. भारत से बाहर देशों में शारदा लिपि

भारत के समीपवर्ती कुछ देशों में भी जो लिपियां प्राचीन या अर्वाचीन काल में प्रचलित रही उनमें भी शारदा लिपि का परिवर्तित रूप प्रतीत होता है। यह उन विशेष देशों की उन लिपियों से-जो पहले और अब भी वहां प्रचलित हैं स्पष्ट होता है। यहां पर कुछ देशों की लिपियों का विवरण प्रस्तुत करते है :—

(क) जापान

इस देश की प्राचीन लिपि जिस रूप की थी और जो अब भी वहां की देशी लिपि मानी जाती है और प्रचलित भी है वह शारदा लिपि से निकटतम साम्य रखती है। इस ग्रन्थ की 'तृतीया शिखा' में दिये गये प्रतिलिपि पत्र ८ को देखने से यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि जापान की लिपि शारदा ही रही होगी। अथवा इसी को थोड़ा रूपान्तर कर अपनी लिपि बनाई होगी। इस लिपि पत्र के '[illegible]' इन अक्षरों से यह बात असंदिग्ध रह जाती है क्योंकि यह अक्षर शारदा लिपि में भी इसी तरह लिखे जाते हैं।

(ख) बालीद्वीप

इस द्वीप में एक लिपि प्रचलित है जिसे 'सिद्धमिति' नाम से जाना जाता है। इसके वर्ण भी शारदा लिपि के वर्णों के साथ बहुत मिलते

जुलते हैं। इस लिपि का प्रयोग वहां मन्त्रतन्त्रादि के लिखने में अधिकतर किया जाता है।

(ग) तिब्बती

यह लिपि शारदाक्षरों के संयुक्त लिपि से अधिक समानता रखती है। लिखनें का क्रम तथा वर्णविन्यास शारदा-लिपि जैसा ही है। इस लिपि को 'भौट-लिपि'[1] भी कहा जाता है।

(घ) गिलगिती

यह भी 'शारदा लिपि' के समान है। इसे 'शानीलिपि' कहते हैं। सन् १९३५ में गिलगित में एक टीले के पास प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों से भरा हुआ सन्दूक मिला था। उस समय के कश्मीर दरबार ने उनको श्रीनगर के 'रिसर्चविभाग' में संग्रहीत किया था। इनकी लिपि ब्राह्मी, शारदा में अधिकतर थी। इनको Gilgit Manuscripts' कहते हैं।

८. शारदा लिपि और कश्मीरी भाषा

शारदालिपि का जन्म शारदा देश कश्मीर में ही हुआ था। इसकी सप्रमाण विवेचना हम सविस्तार पूर्व प्रकरण में कर चुके हैं। कश्मीर की भाषा का इस लिपि के माध्यम से लिखा जाना स्वाभाविक ही था। इसी लिये पाश्चात्य विद्वान् 'श्री इल्मिसिली'[2] महोदय ने भी यह मत प्रकट

---

१. क्षेमेन्द्र की रचना 'अवदान कल्पलतिका' एक बौद्ध ग्रन्थ है। इसका आधा भाग क्षेमेन्द्र के पुत्र सोमेन्द्र ने तिब्बत से लाकर पूर्ण किया था। यह ग्रन्थ नागरी तथा तिब्बती दोनों लिपियों में विस्तृत भूमिका एवं अनुवाद सहित कलकत्ता से प्रकाशित हुआ है। यह मैंने B. H .U. में गाइकवाड पुस्तकालय में १९३६ में देखा था । इसके बाद आज तक किसी भी जगह दृष्टि-गोचर नहीं हुआ।

२. '···Who is said to have reduced Kashmir Language to writing.'

("Kashmir Vocabulary" PP 678 London 1972)

किया था कि इस भाषा को लिखने के प्रयोग में शारदा लिपि के माध्यम से ही लाया गया था। इसका निर्देश इस ग्रन्थ के 'प्रथम शिखा' के प्रारम्भ में भी कर चुके हैं। कश्मीरी विद्वानों ने अन्य भारतीय विद्वानों की तरह अपनी भाषा में साहित्य रचना करने के लिए लेखनी नहीं उठाई। उन्होंने संस्कृत साहित्य का ही भण्डार अपनी रचनाओं से समृद्ध किया। यहां तक कि अन्य भाषाओं में लिखे हुए ग्रन्थों को भी संस्कृत में ही काव्यबद्ध किया। इसका प्रमाण पण्डित श्रीवर का 'कथाकौतुकम्'[1] और राजानक भट्टाह्लादक का 'देलरामा[2] कथा सार' हैं। ये दोनों मुसलमानों के शासन काल में अरबी भाषा से संस्कृत में अनूदित किये गये थे। संस्कृत-साहित्य में यही दो रचनाएँ ऐसी उपलब्ध हैं।

वास्तव में कश्मीरी भाषा के लिए शारदा लिपि ही उपयुक्त तथा भाषा की उच्चारण ध्वनियों को प्रकट और सहीतौर से बोलने की क्षमता रखने वाली वैज्ञानिक लिपि है। भाषाशास्त्र के विद्वान जो इस भाषा में नहीं बोलते-उन का यही मन्तव्य था और अब भी है। देखिए:—

'But Kashmir was suffering (and is still suffering) from a great handicap in not possessing a suitable alphabet. It is now generally written in the Perso Arabic script which is very unsuitable for the genius of the language. The old Sarada alphabet confined to Kashmir Brahmins and restricted to the religious and ritualistqic purposes only, represents an archaic tradition in orthograph. This also could not be adapted to modern times inspite scholars like Ishwar Koul and G. A. Grearson.'

'Cultural Heritage of India'

(Vol. V Part III Page 530 II Edition 1978)

प्राचीन कश्मीरी विद्वानों ने कश्मीरी भाषा में साहित्य रचना नहीं की हो, ऐसी बात नहीं। इस भाषा में लिखने के लिये भी कुछ मूर्धन्य

---

१. इसमें यूसुफ जोले खां की प्रणयकथा है।

२. 'दिलाराम' कथा कश्मीर में प्रसिद्ध है।

विद्वानों ने अपनी लेखनी उठाई और उत्कृष्ट साहित्य रचना की है। इनमें से महाराजा प्रवरसेन का 'सेतु बन्ध महाकाव्य' उल्लेखनीय है। यह ग्रन्थ उस समय की कश्मीरी भाषा में है और इसको प्राकृतभाषा का भी काव्य माना गया। वास्तव में यह कश्मीरी भाषा का 'आदि ग्रन्थ' है। इस काव्य की रचना से प्रवरसेन भारत में महाकवियों की श्रेणी में परिगणित हुए और विदेशों में भी उस की ख्याति हो गई थी। यह महाकवि बाणभट्ट की इस उक्ति से प्रतीत होता है—

'कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला।
सागरस्य परं पारं कपि सेनेव सेतुना॥'

दूसरी रचना 'कः फणाभ्युदय' है। यह महाकाव्य राजा अवन्ति वर्मा के सभाकवि शिवस्वामी ने सन् ८५५ ई. में लिखा है। शिवस्वामी के विषय में

'मुक्ताकरणः शिवस्वामी
कविरानन्द वर्धनः।
प्रथां रत्नाकरश्चागात्
साम्राज्येऽवन्ति वर्मणः॥'

(रा. त. ५ त.)

कल्हण का यह कथन सिद्ध करता है कि शिवस्वामी उस समय के उत्कृष्ट विद्वानों में माने जाते थे। शिवस्वामी के कुछ पद्य क्षेमेन्द्र ने 'औचित्य विचार चर्चा' और सुवृत्ततिलक' में भी उदाहरण के लिए प्रस्तुत किये हैं। पण्डित कल्हण के अनुसार महाराजा अवन्ति वर्मा के राज्यकाल में 'कःफणाभ्युदय'[1] काव्य की रचना हुई थी।

---

१. यह काव्य मुझे डा० गौरीशंकर, भू. पू. कुलपति कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से सन् १९४५ में उनके पास देखने में आया था। इसके पद्य प्राचीन अपभ्रंश प्राय कश्मीरी भाषा के प्रतीत होते थे। यह उस समय की साहित्यमय कश्मीरी भाषा के होते थे, ऐसी मेरी धारणा हुई। डाक्टर साहब ने इसको इंग्लैण्ड में सम्पादित कर प्रकाशित कराया था। यह कई स्थलों में त्रुटित अतः अपूर्ण सा लगता था।

यह नाम इस बात का संकेत करता है कि 'कः फणाभ्युदय' लोक भाषा में लिखा गया होगा और लिपि शारदा ही रही थी क्योंकि उस समय यही एकमात्र और प्रधान लिपि थी। इसके बाद के कई विद्वानों ने भी कश्मीरी भाषा में साहित्य रचना की थी जैसे 'शितिकण्ठ' का 'महानय प्रकाश', 'द्वितीयक्षेमेन्द्र' का 'लोकप्रकाश' आदि। शारदालिपि के माध्यम से ही कश्मीरी या अपभ्रंश की साहित्य-रचना होती थी।

शारदा लिपि में लिखे गये ग्रन्थों को प्रतिलिपि या अनुवाद आदि करते समय उत्तम और शुद्ध 'आदर्श ग्रन्थ' माना जाता था। यह निम्न उद्धरण से स्पष्ट हो जायेगा—

'A critical study of the manuscript material has shown that Ma habharata' has come down to us in two main recensions, the northern and the southern corresponding to the main types of Indian scripts............Thus the northern recension comprises the Sarada or Kashmiri, Nepali, the Marathi, the Bengali and the Devnagri versions............where two classes of manuscripts agree on a textual unit in opposition to other two classes, preference is given to that side on which the Kashmiri manuscripts stand.' (Cultural Heritage of India, Vol. II Pages 63-64, 1962 Calcutta)

६. मुसलमानों के शासन काल में

जब समस्त उत्तरीय भारत में मुसलमानों का शासन होने लगा तब पंजाब के मैदानों में शारदालिपि का स्थान टाकरी और गुरुमुखी लिपियां लेने लगीं थी। ज्यों-ज्यों शासन विस्तृत और दृढ़ होता गया इनके स्थान पर फारसी और अरबी लिपियां प्रचलित होने लगी। किन्तु पंजाब के पहाड़ी प्रदेशों में तब भी शारदा लिपि का ही अधिक प्रचार रहा।

कश्मीर में मुसलमानों की राज्यसत्ता प्रतिष्ठित होने के अनन्तर भी बहुत समय तक संस्कृत भाषा और शारदा लिपि राज्यकार्यों में भी

व्यवहृत होती रही। इसका आभास पण्डित जोनराज और पण्डित श्रीवर की राजतरङ्गिणी में पाया जाता है। संस्कृत और अरबी में परस्पर आदान प्रदान श्रीवर के समय में होने लगा था। पण्डित श्रीवर का 'कथा-कौतुकम्'[१] इसका प्रमाण है। इसी काल में श्री भट्टाह्लादक राजानक ने भी अरबी के एक प्रेमकाव्य का संस्कृत में काव्यबद्ध अनुवाद कर 'देलरामा कथासार'[२] लिखा था। पण्डित श्रीवर-जो जोनराज के अनन्तर राजतरङ्गिणी का कर्ता है-ने कबर को 'शवगर्त' और कबरिस्तान को 'शवाजिर' नामों से निर्दिष्ट किया है। कहने का अभिप्राय यह है कि आदान-प्रदान के रूप में लिपि का भी शनैः शनैः विस्तार और संकोच होने लगा था। परन्तु राजकीय कार्यों में शारदा लिपि की ही पहले-पहले मान्यता रही और फिर इसके साथ साथ ही फारसी लिपि का भी प्रयोग होने लगा। फारसी लिपि को जनता पर जबरदस्ती से नहीं लादा गया था ऐसा होना भी सम्भव नहीं था। इसकी पुष्टि उन कतिपय शिलालेखों से भी होती है जो उस समय की कबरों पर कहीं-कहीं शवगर्त स्मारक [Tombstone] के रूप में उपलब्ध हुए हैं। जिन में कुछ 'लोलाब'[३] के कबरिस्तानों की कुछ एक कबरों[४] पर मिले हैं।

---

१. यह निर्णयसागर में मुद्रित हुआ है। इसमें कवि ने 'मुल्लाज्यामीन' लिखित अरबी के अनुवाद के रूप में 'योसुफ जोलेखा' की प्रणय कथा का वर्णन किया है।

२. यह भी निर्णयसागर प्रेस में मुद्रित हुआ है। 'दिलाराम' की कथा अब भी कश्मीरी लोगों में प्रसिद्ध है।

३. 'लोलाब' जिला बारामूला कश्मीर के उत्तर पश्चिम में अवस्थित है।

४. मुझे मित्रवर श्री प्रेमनाथ जी बजाज से यह उन दिनों मालूम हुआ था जिन दिनों अर्थात् १९४०-४१ ई. में मैं उनके उर्दू दैनिक 'हमदर्द' में कश्मीर की संस्कृति आदि के सम्बन्ध में लेख लिखता था। मेरा एक विस्तृत लेख उसमें 'शारदा' लिपि के विषय में भी छपा था और श्री बजाज साहेब ने कहा था कि स्वर्गीय महजूर-जो कश्मीर के प्रसिद्ध कवि [कश्मीरी भाषा] थे —के सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन ने लोलाब में कई कबरों पर शारदा लिपि और फारसी दोनों लिपियों के शिलाखण्डों की प्रतिलिपियों का संग्रह किया है।

इस पुस्तक की 'तृतीया-शिखा' में संग्रहीत लेख-प्रतिलिपि ६ से भी यह स्पष्ट है कि १४८४ ई. तक भी शारदालिपि को सम्मानित दर्जा दिया जा रहा था। डां. स्टीन महोदय ने कल्हण राजतरङ्गिणी की सब से पुरानी जो पाण्डुलिपि प्राप्त की थी वह राजानक रत्नकण्ठ[1] की हाथ की लिखी थी। इसकी एक 'फोटोस्टैट' प्रतिलिपि उन्होंने राजतरङ्गिणी के संस्कृत-मूल को मुद्रित प्रति के साथ नमूने के तौर पर केवल एक पृष्ठमात्र रखी थी। रत्नकण्ठ का समय १७ वीं शताब्दी का पूर्वार्ध था जब औरंगजेब का राज्य था। क्योंकि रत्नकण्ठ ने अपने अन्य टीकाग्रन्थों में स्वयं लिखा है

[2]'अवरंगमहीपाले कृत्स्नां शासति मेदिनीम्"

१०. डोगरा शासन काल में

शारदा लिपि का प्रसार और प्रचार डोगरा शासन काल में कम होता गया और फारसी तथा अरबी का प्रचार यद्यपि पहले से कम हो गया था, तथापि शारदा से बहुत अधिक था। इसका प्रधान कारण अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार था। अब तो इस काल में शारदा लिपि राज्यकार्यों में तो दूर रहा जन साधारण के व्यवहार में भी कम आने लगी थी। इतना ह्रास होने पर भी हिन्दू लोग [कश्मीरी पण्डित] इस चिरन्तन लिपि को भूल नहीं गए थे बल्कि इसके प्रसार तथा प्रचार का प्रयत्न होता रहता था और राजकीय सहायता से पाठशालाओं में इसका प्रशिक्षण होता रहता था। इसी समय में कई पाश्चात्य अन्वेषक कश्मीर आते रहे, जिनमें उस काल के विषय में 'शारदा' का प्रचार कैसा था अपना मत एक ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

The Sarada character is ancient indigenous character of Kashmir ·· It is still used by Hindus and is taught in their schools.'

Lingquistic Survey of India' by Sir, George Grearson.
Vol. VIII Part II Page 254

---

१. उसके अन्त में स्वयं लिपिकर्ता ने यह लिखा था 'लिखिता चैषा मया राजानक रत्नकण्ठेन काष्ठवाट विषये'।

२. स्तुतिकुसुमाञ्जलि की रत्नकण्ठकृत टीका के अन्त में।

यह वर्णन सर जार्ज ग्रियर्सन ने उस समय का दिया है जब वह १८७० के लगभग वर्षों में कश्मीर आए थे। डॉ० व्यूलर एवं डॉ० स्टीन महोदयों ने भी इसी सदी के सातवें से नवें दशक में अपने विवरण लिखे हैं और शारदा लिपि के कश्मीरी पण्डितों में प्रचार को देखा था।

शारदा लिपि इस समय केवल पण्डित और पुरोहित वर्ग की लिपि रहने लगी थी यद्यपि अब इस के माध्यम से पठन-पाठन की प्रणाली का ह्रास होता जा रहा था।

इसी काल में इस सदी के प्रथम दशक में ही श्रीनगर में 'विश्वनाथ प्रिंटिंग प्रेस, की स्थापना हो गई थी। इस में 'शारदा लिपि' के माध्यम से नक्षत्रपत्री [कश्मीरी पंचांग] प्रकाशित होने लगी। इनका प्रचार और इनकी मांग प्रायः प्रत्येक कश्मीरी पण्डित के परिवार में होती रही। इधर से उर्दू और अंगरेजी का क्षेत्र दिन व दिन विस्तृत होता गया अतः इन पंचांगों को उर्दू लिपि में भी प्रकाशित किया जाने लगा और उत्तरोत्तर इस की वृद्धि ही होती गई और शारदा-लिपि का प्रचार क्षीण होता गया। इस 'प्रेस' में ज्यौतिष, कर्मकाण्ड तथा तन्त्र ग्रन्थों का भी मुद्रण होता था और वह नागरी लिपि में ही होता था। यदि 'शारदा' लिपि में भी उस समय इन का मुद्रण होता तो शायद इस लिपि का कुछ मुद्रित भण्डार भी हो गया होता।

देवनागरी लिपि का प्रवेश कश्मीर में यद्यपि १३वीं सदी में होने लगा था परन्तु इस लिपि का प्रचार नगण्य सा ही रहा। अधिकतर सर्वसाधारण लोग फारसी, अरबी तथा शारदा लिपि में ही व्यवहार करते थे। राजकीय कार्यों में भी यही प्रचलित थी। इसका प्रमाण तत्कालीन शिलालेख एवं अभिलेख ही हो सकते हैं, जिनमें से कुछ हमने इस ग्रन्थ की तृतीया शिखा में प्रतिलिपियों के रूप में संकलित किए हैं। किन्तु यह कहना तर्कसंगत होगा कि साधारण जनता के पत्र-व्यवहार ग्रन्थ लेखन आदि कार्य इसी लिपि के माध्यम से ही होते रहते थे।

१४वीं सदी तक कश्मीरी भाषा की साहित्य-रचना लघुकथा, गीत इत्यादि के रूप में अधिकतर शारदा लिपि में ही होती थी। जब फारसी और उर्दू का क्षेत्र विस्तृत होने लगा तो शारदा लिपि के अभिज्ञों की

संख्या घटती गई और इस का क्षेत्र भी संकुचित होने लगा। परन्तु इस समय में तो भी भास्कर कण्ठ ने शारदा लिपि में कश्मीरी भाषा की एक विशिष्ट एवं प्रिय कृति 'लल्लेश्वरीवाक्याकि' की रचना की। इस की लिपि शारदा ही रही। भास्कर कण्ठ के अतिरिक्त इस समय की कतिपय फुटकर रचनायें भी मुझे कई बार यत्र-तत्र देखने को मिली हैं परन्तु वह प्रकाशित नहीं हुई और वह विशेष महत्त्व की भी नहीं थीं। परन्तु इनसे यह मानने में हमारा आधार बन जाता है कि उस काल में अधिकतर लोग इस लिपि के माध्यम से ही लिखने-पढ़ने आदि का व्यवहार करते थे। इस समय में लिखे गये शारदा लिपि के माध्यम की अनेक महत्त्वपूर्ण पाण्डु-लिपियां अब भी घरों में या संग्रहालयों तथा पुस्तकालयों में भारत तथा विदेशों में सुरक्षित रखी गई हैं—उपलब्ध हो जाती है। महाभारत, रामायण तथा पुराण आदि का वाङ्मय इसी समय प्रतिलिपि किये गये थे।

१४ वीं सदी तक कश्मीरी भाषा की भी साहित्य रचना मुख्यतया शारदालिपि में ही हुआ करती थी जैसा कि हम पूर्व प्रकरणों में वर्णन कर चुके हैं। उस समय के साहित्य में कश्मीरी भाषा में संस्कृत प्रधानता थी जैसा कि हम 'लल्लेश्वरी' वाक्यों में इसका आभास पाते हैं। जब फारसी और अरबी का प्रचार बढ़ता गया तब शारदा लिपि का भी प्रचार घटता गया। शनैः शनैः फारसी के स्थान पर उर्दू का प्रचार अधिक होने लगा। 'लल्लेश्वरी' के इतस्ततः बिखरे हुए "वाक्यों" को जो कुछ लिखित रूप में पाये जाते थे और बहुत से श्रुति परम्परा से ही चलते आ रहे थे—पण्डित प्रवर १९ वीं सदी के पांच दशकों तक तो नागरी लिपि के साथ शारदा लिपि का भी साथ साथ प्रचलन रहा और रात्रिपाठशालाओं में अन्य धार्मिक पुस्तकों के पाठन के साथ इस लिपि में लिखित धार्मिक या अन्य काव्यादि ग्रन्थों को भी पढ़ाया जाता था। ऐसा निर्देश उस समय के बहुत से पाश्चात्य पर्यटकों और गवेषकों के विवरणों में मिलता है।

११. स्वतन्त्र-शासन-काल में अब

इस सदी के पांच दशकों तक तो शारदा लिपि को जानने वाले कश्मीरी ब्राह्मणों की संख्या अत्यल्परूप में थी ही; परन्तु उसके अनन्तर वह थोड़ी बहुत संख्या भी घटती रही और इस समय तो ऐसे कश्मीरी

पण्डितों की संख्या २-३ सौ[1] तक ही होगी जो इस लिपि को पढ़ने में या लिखने में सक्षम हों। जैसे आज की पीढ़ी को अपने वंश के पितामह या अधिक से अधिक प्रपितामह तक के पुरुखों का ही नाम याद होता है, इसी प्रकार इस महावृद्ध पितामही का भी हाल है। लोग इसका नाम तक भी भूलते जा रहे हैं। इसका एकमात्र शरण स्थान कश्मीर में कश्मीरी पण्डितों के 'जातकों'-[जन्म कुण्डली, वर्षफल] के कागज पत्रों में था परन्तु अब वह भी देवनागरी और उर्दू लिपि में भी होने लगी है। यह समय की विडम्बना ही समझिए। जिस देश के लोगों के विषय में महाकवि 'बिल्हण' के यह गौरवपूर्ण उद्गार थे—

'ब्रूम[2]: सारस्वत कुल भुवां
किं निधे: कौतुकानाम्
तस्यानेकाद्भुत गुण कथा-
कीर्ण-कर्णामृत स्य।
यत्र स्त्रीणामपि किमपरं
जन्म भाषा वदेव,
प्रत्यावासं विलसति वच:
संस्कृतं प्राकृतं च॥

१९वीं सदी के प्रारम्भ में नागरी लिपि के साथ शारदा लिपि भी प्रचलित रही। रात्रिपाठशालाओं में—जो 'धर्मार्थ विभाग जम्मू कश्मीर रियासत' के द्वारा चलाई जाती थी और कुछ राजकीय शिक्षा विभाग के द्वारा भी चलाई जाती थी—नागरी लिपि एवं शारदा लिपि की पुस्तकों विशेषकर धार्मिक सम्बन्धी ग्रंथों को भी कहीं-कहीं पढ़ाया जाता था। इस का निर्देश तत्कालीन पाश्चात्य पर्यटकों और गवेषकों के विवरणों में भी कहीं-कहीं पाया जाता है। इसका हमने पहले भी उल्लेख किया है।

भास्कर कण्ठ ने संगृहीत किये थे और बहुत से 'वाक्यों' का संस्कृत

---

१. यह केवल अनुमान ही है। कम भी हो सकता है या अधिक भी।
२. विक्रमाङ्कदेव चरितम् बिल्हण रचितम् सर्ग १८ श्लोक ७।

भाषा में पद्यबद्ध अनुवाद किया था। उदाहरण के लिए यहाँ एक पद्य प्रस्तुत करते हैं।

शारदा में—

कश्मीरी भाषा—मूल 'वाक्य'—

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

नागरी लिपि में—

लल बुह् द्रायस लु लरे,
दया छाडान लूसुम् दुह्।
वो छुम् दय् पनूनि गरे,
लो लरे लुह्।

संस्कृत में अनुवाद—

'लल्लाहं निर्गता ह्रराद्,
द्रष्टुं विश्वेश्वरं हरम्।
स तु मन्मनस्येवासीद्
न तु वेश्मनि वेश्मनि ॥'

---

१. कश्मीर के मुस्लिमकाल में जो सन्तों ऋषियों (कश्मीरी भाषा में) सूफियों ने कश्मीरी भाषा में रहस्यवाद के द्योतक पद्य या गद्य में उक्तियां कही थी उनको वाक्य या कश्मीरी में वाक् कहते हैं।

२. मैंने इस की प्रतिलिपि श्रद्धेय डा० कान्तियद पाण्डेय को १९३२ में श्रीनगर में रहकर नकल कर के दिया था। नकल करते समय मुझे श्रीभास्कर कण्ठ के अन्य कई ग्रन्थों का और जीवनवृत्त का पता लगा था। यह विद्वान् श्रीनगर के श्री विश्वेश्वररजदान का पूर्व पुरुष था। और सत्तारहवीं सदी के उत्तरार्ध में विद्यमान था।

श्री भास्कर कण्ठ संस्कृत के अन्तिम उद्‌भट विद्वान थे। इन्होंने 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी' पर एक अतिविस्तृत भाष्य लिखा है जो मुद्रित हो चुका है। यह १७वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में थे।

१९वीं सदी के पांच दशकों तक तो नागरी लिपि के साथ शारदा लिपि का भी साथ साथ प्रचलन रहा और रात्रिपाठशालाओं में अन्य धार्मिक पुस्तकों के पाठन के साथ इस लिपि में लिखित धार्मिक या अन्य काव्यादि ग्रंथों को भी पढ़ाया जाता था। ऐसा निर्देश उस समय के बहुत से पाश्चात्य पर्यटकों और गवेषकों के विवरणों में मिलता है।

द्वितीय-शिखा

१-शारदा-अक्षर

स्वर

व्यञ्जन

२-अंक-परिचय

𑇑 𑇒 𑇓 𑇔 𑇕 𑇖 𑇗 𑇘 𑇙 𑇑·

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १०

शतादि

𑇑··, 𑇑···, 𑇑····,

१०० १००० १००००

शारदा में गोल चिह्न (zero) के स्थान पर केवल बिन्दु '.' चिह्न ही लिखा जाता है। जैसे—

𑇑·𑇔, 𑇑··𑇙, 𑇒𑇒𑇓· आदि

१०४, १००९, २२३०, आदि

३-शारदा वर्णों के नाम तथा उनका विवरण

(१) स्वर

शारदा	नागरी	नाम	नाम का संस्कृत मूल	विवरण
𑆃	अ	आदव् अ	आदौ 'अ'	पहला अक्षर 'अ'
𑆄	आ	अँतव आ	अतः 'आ'	इसके बाद 'आ'
𑆅	इ	इयव इ	इ 'इव' इ	इव [समानार्थक] में जो 'इ' है
𑆆	ई	ईशरव 'ई'	ईश्वरे 'ई'	ईश्वर शब्द में जो 'ई' है
𑆇	उ	उपल 'उ'	उपले उ	उपल (पत्थर) शब्द में जो 'उ' है
𑆈	ऊ	उपल बां ऊ	उपले बाहु 'ऊ'	उपल शब्द के 'उ' के पीछे से रेखा लगाकर 'ऊ' बनता हैं
𑆉	ऋ	रिनव् ऋ	ऋणवत् 'ऋ'	ऋण (कर्ज़) शब्द में जो 'ऋ' है
𑆊	ॠ	रूखव् 'ॠ'	रेखावत् 'ॠ'	[ऋ में एक रेखा (ृ) जोड़ने से ॠ बनता है
𑆋	ऌ	लियव 'ऌ'	कश्मीरी भाषा मूल	'ऌयव' का अर्थ कश्मीरी भाषा में 'पूरा होना' होता है अब तो इसका उच्चारण 'लूयव' इस प्रकार रह गया है।

𑆒	ऌ	(१) लीसव् ऌ (२) ऌसव	ऌस कश्मीरी भाषा मूलक है।	'ऌस' कश्मीरी में चौलाई के साग को कहते हैं। अब तो इसको 'लीस' कहा जाता है।
𑆍	ए	क्रालव 'ए'	'करवाले' इव ऐ	'ए' की रचना तलवार की तरह है।
𑆎	ऐ	त्राली 'ऐ'	त्रि आली [ऐ]	तीन आली [पंक्तियां] मिलकर फिर एकाकार बनकर (ऐ) बनाती है।
𑆏	ओ	उठो (ओ) वू	ओष्ठे 'ओ'	ओष्ठ शब्द में जो ओ है।
𑆐	औ	औषधी 'औ'	औषधे औ	औषध शब्द में जो औ
𑆃𑆁	अं	मस फ्युर 'अं'	मसी बिन्दुवत् 'अं'	मसी से एक बिन्दु लगाकर अर्थात् 'अ' के ऊपर ही स्याही क एक बिन्दी लगाने से अं बनेगा।
𑆃𑆂	अः	दो फ्चुर 'अः'	द्वि बिन्दु वत् 'अः'	'अ' के पीछे दो बिन्दु लगाकर 'अः' बनता है
𑇃		अॅक संगोर	एक संग्रहः	शारदा में एक यह विशिष्ट वर्ण मानना चाहिए। वास्तव में इसे एक गुप्त संग्रहाकार चिह्न मानना चाहिए इसका विस्तृत वर्णन पृथक् दिया है।

(२) व्यञ्जन

क	कोवुक	कवौ 'क'	कवि शब्द में जो क' है।
ख	खुनि 'ख'	खनौ 'ख'	खनि [खान] शब्द में 'ख' है
ग	गगरी 'ग'	गरागरी 'ग'	गरागरी [कद्दू] में जैसा 'ग'
घ	घॅस् 'घ'	घासे 'घ'	घास (तृण) शब्द में जो 'घ'
ङ	ङा [ना] र गुन् 'ङ'	नागरङ्गे 'ङ'	नागरङ्ग [संगतरा] में 'ङ' है
च	चाटुव 'च'	चाटौ 'च'	चाटु [खुशामद] शब्द में जो 'च' है
छ	छटिन्य 'छ'	छटायाम् 'छ'	छटा [शोभा] शब्द में 'छ' है
ज	जय् 'ज'	जये 'ज'	जय में जो 'ज' है
झ	झषेन्य 'झ'	झषे 'झ'	झष [मत्स्य]झ शब्द में
ञ	खुनफुटि 'ञ'	कश्मीरी भाषा मूल क	वह वर्ण जिसके एक तरफ की खुन [कोहनी] या बाजू टेड़ी हो
ट	अरमाण् 'ट'	अष्टमाणिकायां 'ट'	अष्टमाणि का [एक प्रकार का वजन] जो तोलने के व्यवहार में लाया जाता था। उसमें जो 'ट' है

ठ	सरमाण् 'ठ'	षष्ठिमणिकायां 'ठ'	'षष्ठिमाषिका' अर्थात् 'साठमानिका' वाले वजन में जो 'ठ' है।
ड	डुह ड	डुह ड ['डुह विहाय सा गतौ' धातु, उड्डयनार्थक]	डुह [उड़ले] मे जो 'ड' है।
ढ	ढक् 'ढ'	ढक्कायां 'द'	ढक्का [नगाड़ा] शब्द में जो 'द' है
ण	नानगुण् 'ण'	निर्गुणे 'ण'	निर्गुण शब्द में जैसा 'ण' है।
त	तोव् 'त'	तव त ['तव' इति शब्दे]	तव शब्द में 'त'
थ	थॅज्य-'थ'	कश्मीरी भाषा मूलक क	थॅज्य [एक पात्रविशेष जिसका प्रयोग स्वर्णकार सोना गलाने में करते हैं] उस शब्द में जैसा 'थ'
द	ददुव्-द	दवे-दः	दव [दावाग्नि] में जैसा 'द'
ध	धून्य्-ध	धनुषि 'ध'	धनुष् शब्द में जो 'ध' है
न	नस्तून 'न'	नासायाम् 'नः'	नासा शब्द में 'न'
प	पडुर-प	पदे-प	पद शब्द में प है
फ	फरेन् फ	फिरन् [कश्मीरी चोला] शब्दे 'फ'	फिरन् शब्द में जैसा 'फ'
ब	बुह-ब	बाहौ-ब	बाहु शब्द में 'ब' है

भ	भयि-'भ'	भ्रातृ शब्दे 'भ'	भ्रातृ शब्द में जो 'भ'
म	मोह-'म'	मोहे-मः वा मम शब्दे 'म'	मोह या मम शब्द में 'म' है
य	याव-य	यवे-यः	यव [जौ] शब्द में 'य'
र	रक-र	राकायां-'रः'	राका शब्द में जो र
ल	लाव-ल	लवे लः	लव [कुश काण्ड या शुष्कघास] में 'ल'
व	वशि-व	वशे वः	वश [अधीन] शब्द में व
श	शकर-श	शर्करायाम्-शः	शर्करा शब्द में श
ष	फॅरि-ष	पारिषदे	पारिषद शब्द में ष
स	सुह-स	सु शब्दे 'स्व' शब्दे वा	सु या स्व [अपना] शब्द में स
ह	हाल-ह	हाल शब्दे हले वा हः	हाला शब्द में या हल में ह है
क्ष	खुल व्युठ्	कल्ल (सिर) व्युठ (मोटा) जिस वर्ण का [कश्मीरी भाषा]	मोटे सिर वाला क्ष है
त्र	त्रुक त्रो व-त्र	त्रिके 'त्रः'	त्रिक (रीड की हड्डी) में जैसा त्र है
ज्ञ	जय जहस्नल	खुन फुट	अर्थात् ज के नीचे। फुटि ञ लिखकर

ण+ =

(ज्ञ) बन जाता है।

४. अक्षरों के नाम—किस भाषा में ?

शारदावर्णों को प्रत्येक वर्ण का अपना अपना नाम है। न केवल वर्णों का ही बल्कि मात्रा एवं संयुक्त रूपों को भी नाम दिया गया है। इसका निर्देश कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने भी किया है। जार्ज ग्रीयर्सन महाशय लिखते हैं—

Each letter is given a separate name, for instance a is named 'adava' initial 'i' is named 'ya yav ye' non initial 'i' is named 'manther, Kha ख is named Khoni Kha, Khsa क्ष is named Kholveth Ksha and so on for the others.

'Linguistic Survey of India' Vol. VIII Page II Page 254.
(दिल्ली मुद्रित)

इन नामों में कुछ दो चार को छोड़कर सब का मूल संस्कृत है। यह वर्णो की तालिकाओं से प्रतीत होगा यह नाम इतने प्रचलित हैं कि प्राय: अशिक्षित व्यक्ति भी कभी-कभी इनको बोलते हुए अब भी कश्मीर में सुने जा सकते हैं। इनका उच्चारण कभी सांकेतिक भाषा के रूप में और कभी कभी मजाक के रूप में भी लोग करते रहते हैं। जैसे मज़ाक करने को 'आदव अ करना' कहते हैं जिसे हिन्दी में शिष्ट लोग 'अंगुलि का करना' कहते हैं। किसी को निरक्षरता का मजाक करना हो तो यह भी लोग कहते है 'अरे! यह तो 'उमा उम' भी नहीं जानता। अश्लीलता के प्रसंगों में तो च, ख, ग, ज, झ, द, इन अक्षरों को नामों का ही अधिकतर प्रयोग करते हैं। तात्पर्य यह कि इन नामों का शिक्षाप्रणाली में वर्णज्ञान को सुगमता से कराने तथा लिखने के अभ्यास के लिये अधिकतर प्रयोग होता रहा है।

नाम की भाषा

(१) अक्षरों का नाम-कारण संस्कृत भाषा में है। यह नामकरण इस आधार पर किया है कि जो अक्षर सिखाया जाता था उसका वह शब्द भी शिष्य के ध्यान में लाया जाता था, क्योंकि यह पद तो उसकी अभ्यस्त बोली का ही होता था। जैसे— 'क' इस वर्ण के सिखाने के लिये

'कवौ क:' अर्थात् 'कवि' शब्द में 'क' की ध्वनि इसी वर्ण 'क' के माध्यम से होती है। इसी का शनै:-शनै: समय के परिवर्तन से 'कोव्क्' यह नाम बनता गया। इसी प्रकार अन्य वर्णों के विषय में भी जानना चाहिए। ये नाम सम्भवत: बहुत प्राचीन हैं। जब कश्मीरी भाषा में अपभ्रंश का समावेश अधिक नहीं था इन नामों से कश्मीरी भाषा के इतिहास पर भी बहुत प्रकाश पड़ता है। कुछ अक्षरों के नामों का न तो संस्कृत मूल ही ही लगता और न ही कश्मीरी भाषा का वह अर्थ अब समझ में आता जैसे 'लृ' का नाम 'लियवले' और 'लॄ' का नाम 'लू सव लू' अब भी बोला जाता है किन्तु इसका कश्मीरी भाषा में भी स्पष्ट अर्थ समझ में नहीं आता। कुछ वर्णों के नाम कश्मीरी भाषा में ही हैं जैसे 'थॅज्य्-थ' और कुछ के नाम कश्मीरी भाषा में उनकी आकृति को समझाते हुए रखे हैं जैसे 'ञ' के लिए नाम दिया गया है 'खुन फुटि ञ' अर्थात् जिसकी एक बाजू कोहनी की तरह मुड़ी हुई है वह ञ[1] [ ] है।

आजकल भी वर्णज्ञान बालक को उन उन वर्णों के अद्याक्षरों का संकेत लेकर कराया जाता है जैसे अ=अनार, आ=आम, उ=उल्लू आदि।

'ञ' अक्षर से संस्कृत में या कश्मीरी भाषा में किसी का भी नाम प्रारम्भ नहीं होता इसलिए इसके स्वरूप के अनुसार इसका नाम बालक को बताया जाता था। आजकल जो 'वर्णमाला' के पुस्तक प्रकाशित किये जाते हैं, उनमें भी 'ञ, ण, ङ्' इन स्थानों को रिक्त ही रखते हैं।

---

१. खुन=कोहनी को कश्मीरी में कहते हैं।

५. शारदा लिपि में विद्यारम्भ का मंगलाचरण

यह एक विशेष परम्परा रही थी कि कश्मीर में विद्यारम्भ अथवा अक्षरज्ञान कराने का प्रारम्भ पहले अ, आ, के साथ नहीं किया जाता था। अपितु

(ओम स्वस्ति......सिद्धं)

इस मांगलिक[1] पदावली से किया जाता था। गुरु या शिक्षक विद्यार्थी की अंगुली [तर्जनी] पकड़कर उससे इन अक्षरों को लिखवाता था और इनका उच्चारण स्वयं भी करता था और शिष्य से भी करवाता था। यह लिखने का अभ्यास 'पोस्द'[2] पर होता था। इस मंगलाचरण के अनन्तर (अ, आ) आदि अक्षर सिखाये जाते थे।

जिस प्रकार सभी अक्षरों के नाम रखे गये हैं उसी प्रकार इस मंगलाचरण के इन अक्षरों को भी नाम दिया गया हैं। इन नामों को भी

---

१. क्षेमेन्द्र के—'कविकण्ठाभरणम्' में इसका आभास मिलता है।

२. एक प्रकार की चौकोर लकड़ी की तख्ती को 'पोस्द' कहते हैं। इस पर बारीक पिसी हुई मिट्टी फैलाकर उसी पर लिखते थे। हमारा अक्षरारम्भ भी इसी तरह हुआ था।
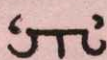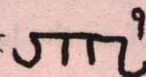
लिखाते समय विद्यार्थी बोलता रहता था। नाम इस प्रकार है—

शारदा	नाम	विवरण	नागरी रूप
	उमा उम्	उ म मिलाकर एकाकार बनाकर ओम	ॐ
	स्वयम् 'स्व'	स्वयम् में जैसा 'स्व'	स्व
	तिविस् 'ति'	'स्तव' शब्द में जैसा 'स्त'	स्ति
	सिदिव 'सि'	सिद्धि शब्द में जैसे 'सि'	सि
	दमर् दम्	धमत् शब्द में जैसे 'ध'	द्धम्
	ओक संगोर	एकः संग्रहाकारः	इसका विस्तृत विवरण अगले पृष्ठ में पढ़ें
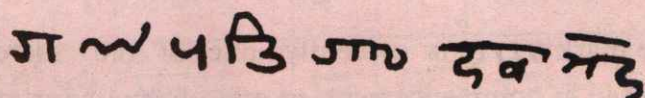
६. 'ओक् संगोर' का विवरण

शारदावर्णों में यह एक महत्त्वपूर्ण और रहस्यपूर्ण 'वर्ण' है। इसका आकार [Sharada sign] इस प्रकार एक मध्यरेखा युक्त और [Sharada sign][1] मध्य में द्विरेखा युक्त भी होता है। इसका न्यास [स्थान] यों तो मंगलाचरण वाली पदावली के 'सि' [भि] वर्ण के बाद विद्यारम्भ के समय कराया जाता है परन्तु कहीं कहीं पर इसका विन्यास स्वरवर्णों के अन्त में और कहीं व्यञ्जनों के अन्त में भी किया जाता था। वैदिक मन्त्रों में संभवतः उदात्त, अनुदात आदि स्वरचिह्नों के लिए इसका प्रयोग होता था जैसे—

[Sharada script]

[Sharada script]

गणानान्त्वा गणपतिं [Sharada sign] हवामहे

'गणानां त्वा गणपतिं [sign] , हवामहे' आदि मन्त्रों में इससे पतिं' के बाद गुड्—जैसी ध्वनि का संकेत किया जाता होगा। परन्तु पाश्चात्य भाषाविज्ञों ने इसका सम्बन्ध शैवागम के दार्शनिक तत्त्वों से भी माना है। यहां पर प्रसिद्ध भाषाशास्त्री श्री जार्ज ग्रीयर्सन का मत उनके ही शब्दों में उद्धृत करते हैं—

"Utterence 'Ok Sam, Gor' and its sign [Sharada sign] object of using this sign is this. In the first place the upper horizontal line—indicates the letter a, that is to say upper-

---

१. मैंने इसी प्रकार विद्यारम्भ के समय सीखा था।

most (अनुत्तर) or Siva, transcending the kula (जीव प्रकृति) four वाद, a secondless (अकुल-अद्वैत स्वरूप).

The two middle perpendicular lines indicate all the vowels from a onwards, while two curved lines ɔ c represent a plough (Hala) and therefore indicate all the consonants (Hal), the whole sign therefore indicate totally of all the letters from a two h"

'Sharda Alphabets' by Sir George Grearson.

Published in Extra number of R. A S. of Bombay Page 701, 1916.

डॉ० फोसल [Phosal, Fosal] नामक विद्वान को 'अमावस्या-त्रिंशिका' नामक एक पुस्तक कश्मीर में जीर्णग्रन्थों के साथ मिली थी जिसमें इसका कुछ वर्णन लिखा था। उनका मत उद्धृत करते हुए सर जार्ज ग्रियर्सन लिखते हैं—

The mark is evidently one of the sacred symbols used at commencement or end of the important writing.'

Linguistic Survey of India
Kashmiri Language JABB Page 679 1916.

कश्मीर में उपलब्ध बहुत से हस्तलिखित ग्रन्थों के आदि में तथा अन्त में भी ' ' यह चिह्न पाया गया है।

इसी के आधार पर संभवतः उन्होंने यह धारणा बनाई थी।

वस्तुतः ' ' 'अ' से 'ह्' तक समस्त मातृका चक्र का एक संक्षिप्त एवं मूलरूप भी है और इसीलिये 'ओक संगोर' अर्थात् 'एक संग्रह' यह संज्ञा दी गई है। 'मातृका चक्र' के स्थापना में भी इसका 'श्रीचक्र' की तरह तान्त्रिक महत्त्व रहा होगा।

७. (क) मात्रा-परिचय

शारदालिपि में नाम वर्णों की मात्राओं के भी रखे गये हैं। कहीं कहीं पर संयुक्त व्यञ्जनों के भी कश्मीरी भाषा में नाम दिये गये हैं जैसे क+ष=क्ष, ज+ञ=ज्ञ। यहां पर मात्राओं के नाम का निर्देश तालिका के द्वारा प्रस्तुत है—

स्वर	शारदा रूप	नागरी रूप	नाम	रूप व्यंजन सहित		उदाहरण	
				शारदा	नागरी	शारदा	नागरी
आ	𑆳	ा	वहाय	𑆫𑆳	रा	𑆫𑆳𑆩	राम
इ	𑆴	ि	मन्धूंर	𑆫𑆴	रि	𑆫𑆴𑆥𑆶	रिपु
ई	𑆵	ी	अरमन्धूर	𑆫𑆵	री	𑆫𑆵𑆠𑆴	रीति
उ	𑆶	ु	ख्वूर	𑆫𑆶	रु	𑆥𑆶𑆫𑆶𑆰	पुरुष
ऊ	𑆷	ू	अरख्वूर	𑆫𑆷	रू	𑆫𑆷𑆥	रूप
ए	𑆼	े	क्वण्ड्	𑆫𑆼	रे	𑆫𑆼𑆒𑆳	रेखा
ऐ	𑆽	ै	हुञ्जोर	𑆫𑆽	रै	𑆫𑆽𑆮𑆠𑆑	रैवतक

स्वर	शारदारूप	नागरीरूप	नाम	रूप व्यंजन सहित		उदाहरण	
				शारदा	नागरी	शारदा	नागरी
ओ	𑆾	ो	ओंकायुर	𑆫𑆾	रो	𑆫𑆾𑆓	रोग
औ	𑆿	ौ	ओकार्श वलाय	𑆫𑆿	रौ	𑆫𑆿𑆫𑆮	रौरव
अनुस्वार	𑆁	ं	मसमयूर	𑆫𑆁	रं	[𑆫𑆁𑆓] 𑆫𑆓	रंग
विसर्ग	𑆂	ः	दोमयूर	𑆫𑆂	रः	𑆲𑆫𑆂	हरः

(ख) मात्रा-परिचय

स्वरीय मूल	शारदा रूप	नागरी रूप	व्यञ्जन युक्तरूप	उदाहरण शारदा	उदाहरण नागरी
आ	ा	ा	प + ा = पा, पा	पाप	पाप
इ	ि	ि	प + ि = पि, पि	पित	पिता
ई	ी	ी	प + ी = पी, पी	पीत	पीत
उ	ु	ु	प + ु = पु, पु	पुनः	पुनः
ऊ	ू	ू	प + ू = पू, पू	पूत	पूत
ऋ	ृ	ृ	प + ृ = पृ, पृ	पृथिवी	पृथिवी
ॠ	ॄ	ॄ			
ए	े	े	प + े = पे, पे	पेशल	पेशल
ऐ	ै	ै	प + ै = पै, पै	पैशाची	पैशाची

नागरी रूप	शारदा				उदाहरण	
	मूल वर्ण	संयुक्त वर्ण	संयुक्त स्वर	पूर्णसंयुक्त रूप	शारदा	नागरी
त्था	𑆠	𑆡	𑆳	𑆠𑇀𑆡𑆳	𑆇𑆠𑇀𑆡𑆳𑆪	उत्थाय
द्दा	𑆢	𑆢	𑆳	𑆢𑇀𑆢𑆳	𑆇𑆢𑇀𑆢𑆳𑆩	उद्दाम
द्धू	𑆢	𑆣	𑆷	𑆢𑇀𑆣𑆷	𑆇𑆢𑇀𑆣𑆷𑆪	उद्धूय
त्प	𑆠	𑆥	𑆃	𑆠𑇀𑆥	𑆇𑆠𑇀𑆥𑆠𑆴𑆠	उत्पतित
त्फु	𑆠	𑆦	𑆶	𑆠𑇀𑆦𑆶	𑆇𑆠𑇀𑆦𑆶𑆬𑇀𑆬	उत्फुल्ल
न्नि	𑆤	𑆤	𑆴	𑆤𑇀𑆤𑆴	𑆇𑆤𑇀𑆤𑆴𑆢𑇀𑆫𑆂	उन्निद्रः
द्भि	𑆢	𑆨	𑆴	𑆢𑇀𑆨𑆴	𑆇𑆢𑇀𑆨𑆴𑆢𑇀	उद्भिद्
द्ग	𑆢	𑆓	𑆃	𑆢𑇀𑆓	𑆇𑆢𑇀𑆓𑆩	उद्गम
		य — व				
र्य	𑆫	𑆪	𑆃	𑆫𑇀𑆪	𑆃𑆫𑇀𑆪𑆩𑆳	अर्यमा
रु	𑆫	◌	𑆶	𑆫𑆶	𑆫𑆶𑆓𑇀𑆟	रुग्ण
रू	𑆫		𑆷	𑆫𑆷	𑆫𑆷𑆥	रूप

नागरी	शारदा				उदाहरण	
	मूल वर्ण	संयुक्त वर्ण	संयुक्त स्वर	संयुक्त रूप	शारदा	नागरी
र्ध्न्या	𑆫	𑆣, 𑆤, 𑆪	𑆳	𑆫𑇀𑆣𑇀𑆤𑇀𑆪𑆳	𑆩𑆷𑆫𑇀𑆣𑇀𑆤𑇀𑆪𑆳𑆢𑆳𑆪	मूर्ध्न्यादाय
न्ध्रे	𑆤	𑆣, 𑆫	𑆼	𑆤𑇀𑆣𑇀𑆫𑆼	𑆫𑆤𑇀𑆣𑇀𑆫𑆼	रन्ध्रे
ग्ध्री	𑆓	𑆣, 𑆫	𑆵	𑆓𑇀𑆣𑇀𑆫𑆵	𑆢𑆾𑆓𑇀𑆣𑇀𑆫𑆵	दोग्ध्री
स्थौ	𑆱	𑆡	𑆿	𑆱𑇀𑆡𑆿	𑆠𑆱𑇀𑆡𑆿	तस्थौ
त्स्थः	𑆠	𑆱, 𑆡	𑆂	𑆠𑇀𑆱𑇀𑆡𑆂	𑆑𑆳𑆑𑆶𑆠𑇀𑆱𑇀𑆡𑆂	काकुत्स्थः
त्स्या	𑆠	𑆱, 𑆪	𑆳	𑆠𑇀𑆱𑇀𑆪𑆳	𑆮𑆳𑆠𑇀𑆱𑇀𑆪𑆳𑆪𑆤	वात्स्यायन:
स्त्यु	𑆱	𑆠, 𑆪	𑆶	𑆱𑇀𑆠𑇀𑆪𑆶	𑆃𑆱𑇀𑆠𑇀𑆪𑆶𑆠𑇀𑆠𑆫𑆱𑇀𑆪𑆳	अस्त्युत्तरस्या
ण्ड्रा	𑆟	𑆝, 𑆫	𑆳	𑆟𑇀𑆝𑇀𑆫𑆳	𑆠𑇀𑆮𑆟𑇀𑆝𑇀𑆫𑆳	त्वण्ड्रा
त्क्षा	𑆠	𑆑𑇀𑆰	𑆳	𑆠𑇀𑆑𑇀𑆰𑆳	𑆑𑇀𑆰𑆶𑆠𑇀𑆑𑇀𑆰𑆳𑆩	क्षुत्क्षाम:
त्र्य	𑆠	𑆫 𑆪	𑆃	𑆠𑇀𑆫𑇀𑆪	𑆠𑇀𑆫𑇀𑆪𑆩𑇀𑆧𑆑	त्र्यम्बक:
त्र्यू	𑆠	𑆫 𑆪	𑆷	𑆠𑇀𑆫𑇀𑆪𑆷	𑆠𑇀𑆫𑇀𑆪𑆷𑆰𑆟𑆩𑇀	त्र्यूषणम्
र्श्मी	𑆫	𑆯 𑆩	𑆵	𑆫𑇀𑆯𑇀𑆩𑆵	𑆃𑆤𑇀𑆠𑆳𑆫𑇀𑆯𑇀𑆩𑆵𑆃	अन्तार्श्मी त

नागरी वर्ण	शारदा				उदाहरण	
	मूल वर्ण	संयुक्त वर्ण	संयुक्त स्वर	संयुक्त रूप	शारदा	नागरी
क्ष्मा	𑆑𑇀𑆰	𑇀𑆩	𑆳	𑆑𑇀𑆰𑇀𑆩𑆳	𑆑𑇀𑆰𑇀𑆩𑆳𑆨𑆸𑆠𑇀	क्ष्माभृत्
ञ्ची	𑆚	𑆖	𑆵	𑆚𑇀𑆖𑆵	𑆑𑆳𑆚𑇀𑆖𑆵	काञ्ची
च्यु	𑆖	𑇀𑆪, 𑆪	𑆶	𑆖𑇀𑆪𑆶	𑆖𑇀𑆪𑆶𑆠𑇀	च्युत्
ञ्झा	𑆚	𑆙	𑆳	𑆚𑇀𑆙𑆳	𑆙𑆚𑇀𑆙𑆳	झञ्झा
र्झ	𑆫	𑆙	𑆃	𑆫𑇀𑆙	𑆤𑆴𑆫𑇀𑆙𑆫	निर्झर
कू	𑆑		𑆷	𑆑𑆷	𑆑𑆷𑆰𑇀𑆩𑆳𑆟𑇀𑆝	कूष्माण्ड
द्यु	𑆢	𑆪	𑆶	𑆢𑇀𑆪𑆶	𑆮𑆴𑆢𑇀𑆪𑆶𑆠𑇀	विद्युत
न्द्र	𑆤	𑆢 𑇀𑆫	𑆃𑆂	𑆤𑇀𑆢𑇀𑆫	𑆖𑆤𑇀𑆢𑇀𑆫𑆂	चन्द्रः
कृ	𑆑	𑇀𑆫	𑆃	𑆑𑆸	𑆑𑆸𑆖𑇀𑆖𑇀𑆫, 𑆑𑆸𑆖𑇀𑆗𑇀𑆫	कृच्छ्र
भू	𑆨	𑇀𑆫	𑆷	𑆨𑆷	𑆨𑆷	भू
द्रौ	𑆢	𑇀𑆫	𑆿	𑆢𑇀𑆫𑆿	𑆢𑇀𑆫𑆿𑆥𑆢𑆵	द्रौपदी
ह्य	𑆲	𑆪	𑆃𑆂	𑆲𑇀𑆪𑆂	𑆲𑇀𑆪𑆂	ह्यः
हृ	𑆲		𑆸	𑆲𑆸	𑆲𑆸𑆢𑆪	हृदय

१०. संयुक्त वर्णों के रूप-विवरण

देव नागरी लिपि से शारदा वर्णों के संयुक्त रूपों में अत्यन्त भिन्नता है। स्वरों के साथ संयुक्त होकर जो रूप बनते हैं वह कुछ भिन्न रूप धारण करते ही है किन्तु जब व्यञ्जन भी परस्पर संयुक्त होते हैं तब प्रायः प्रत्येक वर्ण नई ही आकृति बनाते हैं। स्वरों के साथ यह संयुक्त वर्ण मिलने पर कभी कभी अपने मूल रूप से भी एक विशिष्ट एवं पृथक् सी ही आकृति धारण करते है। 'क', र, और 'य' पर यह विशेष कर लागू होता है। देखिये जब 'र' व्यञ्जन के आदि में संयुक्त होता है, तब नागरी वर्णों की तरह ही व्यञ्जन के ऊपर या नीचे मिलता है जैसे 'अर्क' नागरी में और ' [illegible] ' शारदा में मिलकर विशेष भिन्नता नहीं रखता। इसी तरह किसी वर्ण के प्रारम्भ में उस वर्ण के नीचे—इस प्रकार की रेखा बनकर मिलता है जैसे 'ब्रह्मा' नागरी में, और शारदा में [illegible] इस प्रकार लिखा जाता है। इस बात का संकेत श्री ग्रीयर्सन महाशय ने भी किया है, वह लिखते हैं:—

'When 'r' is the first member of a conjunct consonant it does not change its form thus 'rka' ([illegible]). When it is the second member it takes the form of [illegible] as in [illegible] kra'. "Linguistic Survey of India"

Vol: VIII Part II Page 254.

इसी प्रकार 'क' का भी स्वर या व्यञ्जन से मिलने पर कुछ भिन्न सा ही रूप बन जाता है, जैसे क्+उ=कु और क्+ऊ=कू नागरी में बनता है, शारदा में वैसा नहीं बनता, बल्कि क+उ= [illegible] और [illegible] + [illegible] = [illegible] इस प्रकार लिखा जाता है। इसका विस्तार इस पुस्तक में संयुक्त वर्णों की 'तालिका' में किया गया है। 'उ' का व्यञ्जन से मिलने पर [illegible] इस प्रकार का संकेत किया जाता है जैसे 'कुतः'

—शारदा में ऊः इस प्रकार लिखा जाता है। इस को कश्मीरी में खूर (खुर) कहा जाता है। 'ऊ' का चिह्न इस प्रकार का होता है, इस को 'अरखूर' कहते हैं। जैसे 'कूप'—शारदा में इस प्रकार लिखा जाएगा और 'रूप'—शारदा इस प्रकार लिखेंगे और 'धूप'— शारदा में इस प्रकार लिखा जाता है। ऐसे ही 'य' यद्यपि शारदा तथा नागरी में एक से ही है किन्तु जब यह व्यञ्जनों के साथ संयुक्त होता है तब इसका चिह्न इस प्रकार होता है और इसको कश्मीरी में 'शूतरीख' कहा जाता है। जैसे 'व्यापक' शब्द शारदा में और 'वाक्य' इस प्रकार लिखा जाता है। इसी तरह 'त्याग' को शारदा में इस तरह लिखा जाता है। 'संयुक्त वर्ण तालिका' में पाठक एवं जिज्ञासुओं की सुगमता के लिये हमने प्रायः सभी ऐसे रूपों को उदाहरण सहित सविस्तर लिख दिया है।

शारदा वर्ण तथा देवनागरी वर्णों में परस्पर अधिक भिन्नता नहीं है परन्तु संयुक्त वर्णों में महान अन्तर हो जाता है। अति प्राचीन हस्त-लिखत शारदा ग्रन्थों में वर्णों का संयुक्त रूप पढ़ने में साधारण जानकारी वाला व्यक्ति समर्थ नहीं होता है। वास्तव में संयुक्त वर्णों को पढ़ना और लिखना ही शारदा वर्णों का पूर्ण ज्ञान माना जा सकता है। ऐसा ही व्यक्ति अनुसन्धान (रिसर्च) आदि करने में विशेष सफलता प्राप्त कर सकता है। संयुक्त वर्णों की तालिका में जितने सोदाहरण रूप दिये गये हैं, वे ही रूप प्रायः बनते हैं और यदि कोई रूप रह गया है उनको भी यहां पर दिये गये इन रूपों के तथा चिह्न-सूत्रों की सहायता से पाठक स्वयं अनायास जान सकते हैं।

११. पृथक्-पृथक् पदों का परस्पर संयोग

शारदा लिपि के प्राचीन या अर्वाचीन हस्तलिखित ग्रन्थों को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि 'शारदा' में जब एक पद समाप्त होता था तो

देवनागरी लिपि में विशेष कर वर्तमान समय में अधिकतर अनुस्वारं का प्रयोग होता है और जहां एक ही पद अपने वर्गीय सवर्ण से संयुक्त होकर लिखना शास्त्रसंगत माना जाता है वहां भी अनुस्वार का प्रयोग कर काम चलाया जाता है जैसे 'शङ्कर, 'शङ्ख,' 'पाञ्चाल' आदि शब्दों को प्रायः 'शंकर, शंख, और 'पांचाल' इसो प्रकार अधिकतर लिखा जाता रहा है, परन्तु शारदा में यह शब्द अपने सवर्ण वर्गीय से मिलकर ही लिखे हुए मिलते हैं, जैसे (शंकर) (शंख) (पांचाल)। सम्भवतः इसका कारण मुद्रण की सुविधा हो।

१२. अधिक वर्ण संयोग

शारदा में तीन और कभी चार वर्ण भी उर्दू के अक्षरों की तरह संयुक्त होकर एक रूप सा बना लेते हैं। किन्तु ऐसे रूप वाले वर्णों की संख्या अधिक नहीं और ऐसे वर्ण तन्त्र ग्रन्थों में ही अधिक तर पाये जाते हैं। उदाहरण के तौर पर यहां पर कुछ रूपों को देखिये:—

शारदा	संयुक्त वर्ण	नागरी
[illegible]	[illegible]	ऐन्द्रया
[illegible]	[illegible]	काञ्चया
[illegible]	[illegible]	तन्त्र्यूर्ध्वनयन
[illegible]	[illegible]	राष्ट्रिय
[illegible]	[illegible]	स्त्र्युत्कर्षः
[illegible]	[illegible]	उच्छ्राय

१३. शारदा लिपि, केरल, कश्मीर

कश्मीर के साथ महाराष्ट्र, कर्णाटक कोंकण आदि दाक्षिणात्य प्रदेशों का सांस्कृतिक आदान प्रदान का सम्पर्क तो रहता ही था, यह बात ऐतिहासिक तथ्यों से प्रमाणित होती है परन्तु सुदूर दक्षिण में स्थित 'केरल' के साथ कश्मीर का तथा शारदालिपि का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था इस बात को इस समय में सभी शिक्षा शास्त्री सम्भवतः नहीं जानते। यहां पर लिपि के प्रसंग में मैं कुछ इस विषय पर भी प्रकाश डालना उचित समझता हूं इनसे इस कथन की पुष्टि मिलती है कि हमारे पूर्वज देश की एकता के लिये कितने जागरूक रहते थे और इसके लिये वे एक 'लिपि' एक भाषा एवं एक वैचारिक भावनाओं को एक रूपता में रखने को विशेष महत्त्व देते थे। भाषा के लिये, 'संस्कृत' और लिपि के लिये व्यावहारिक आदान प्रदान के लिये 'शारदा' लिपि को 'केरल' देश ने विशेष रूप से अपनाया था। यहां कुछ तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं—

(१) आदि शंकराचार्य का 'मुखं बिन्दुं कृत्वा' इत्यादि पद्य-जो 'सौन्दर्य लहरी' में पाया जाता है—स्पष्ट रूप से यह प्रमाणित करता है कि यहां 'शारदा अक्षर (ई) का ही कामकला के रूप में निर्देश किया गया है।

इससे कहा जा सकता है कि इस लिपि को उस में शिक्षित लोग अवश्य जानते थे।

(२) 'पञ्चस्तवी' स्तोत्र का कश्मीर में सर्वाधिक प्रचार रहा है और अब भी है। इसका प्रचार कश्मीर के अतिरिक्त दक्षिण प्रान्त विशेषकर कर्णाटक और केरल में अधिक है। इस के रचयिता भी दाक्षिणात्य ही थे। ऐसा विद्वानों का कथन है।

(३) 'मुकुन्दमाला' एक कृष्ण स्तुति विषयक भक्तिरचना है। इसके कर्ता राजाकुलशेखर[१] केरल के महाराजा थे। इस स्तोत्र का प्रचार

---

१. कल्याण का 'भक्ताङ्क' देखें।

कश्मीर[1] में अति प्राचीनकाल से अब तक है।

(४) महाकवि मंख ने 'श्रीकण्ठ चरितम्' काव्य में वसन्त वर्णना के प्रसंग में केरल और 'मुरला' (केरल का एक भाग) के उद्यानों और ललनाओं की (मुरलाङ्गनानाम्०) का वर्णन किया है। कवि कश्मीरी था परन्तु केरल के लोगों के सम्पर्क में रहा होगा

(५) 'मंख' की 'काव्यमीमांसा' 'तञ्जोर' पुस्तकालय में मिली थी उसका लिपि काल १२ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध था जब कि मंख का समय १२वीं शताब्दी का उत्तरार्ध था।

(६) 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा' पर भास्कर कण्ठ की विमर्शिनी विवृति है। इसको श्री डॉ. कान्तिचन्द्रपाण्डेय[2] ने सम्पादित करके प्रकाशित किया है। मैंने सन् १९३२ में श्रीनगर में इसका कुछ भाग नकल कर के डाक्टर साहेब को दिया था। कुछ प्रकरण उस आदर्श पुस्तक में नहीं थे उनको कान्तिचन्द्र जी ने भास्कर कण्ठ के वंशजों से देने की प्रार्थना की थी क्योंकि उनके पास ग्रन्थ था और उन्होंने देने का आश्वासन भी दिया था। कई बार मेरे साथ डॉ. कान्तिचन्द जी उनके घर गये। परन्तु उन्होंने कालान्तर में देने को कहा। फिर वह लखनऊ चले गये और मुझे उनसे आदर्श के पत्र लेकर भेजने को कह गये थे। मैं कई बार उनसे मांगने को गया परन्तु वह पत्र नहीं मिले। बाद में डॉ. कान्तिचन्द्र जी ने वह कर्णाटक और केरल से प्राप्त किये।

यहां पर इसका विवरण इसलिये किया कि १६ वीं शताब्दी तक भी कश्मीर और केरल एवं अन्य दक्षिणीय प्रान्तों में ग्रन्थों का और ज्ञान

---

१. मैंने इस स्तोत्र को बहुत प्राचीन शारदा ग्रन्थों के 'स्तोत्र संग्रहों में देखा है इसका प्रतिदिन पाठ करते थे पाठशालाओं में भी पढ़ाते थे। हमने भी पढ़ा है।

२. यह बात हमने 'प्रथमशिखा' में भी लिखी है कि भास्कर कण्ठ श्रीनगर के पं० विश्वेश्वरराजदान का पूर्वपुरुष था और १६वीं के उत्तरार्ध में उसने ग्रन्थ रचना की थी।

विज्ञान के साधनों का आदान-प्रदान होता रहता था। और इसलिये लिपि' का ज्ञान अत्यावश्यक होता है। लिपि के माध्यम से ही दूरस्थ व्यक्ति अपनी अपनी ग्रन्थबद्ध रचनाओं को प्रसारित कर सकता है। कश्मीर में शारदालिपि ही एक मात्र साधारण व्यवहार की लिपि थी।

१४. शारदा लिपि की लेखन शैली

शारदालिपि का ग्रन्थ भण्डार हस्तलिखित रूप में ही पाया जाता है मुद्रित रूप में नहीं क्योंकि प्रचलित न होने के कारण इसका मुद्रण नहीं होता। इस लिपि में वेद, शास्त्र व्याकरणादि ग्रन्थ अब भी कैसे लिखे जा सकते हैं यह उत्सुकता लिपि का अभ्यास करने वालों में स्वभावत: उत्पन्न हो सकती है, अत: यहाँ पर नमूने के तौर पर हम इसकी कुछ झांकियां पाठकों के कौतूहल तथा अभ्यास के लिये प्रस्तुत करना लाभकारक समझते हैं,

हम यहां झांकियां (नमूने) श्रीमद्भगवद्गीता, वेदऋचा; व्याकरण सूत्र, स्तोत्र मन्त्र, बोजमन्त्र, काव्य तथा कश्मीरी भाषा तथा राष्ट्रगीत के अंशों के रूप में प्रस्तुत करते हैं और साथ ही इसको हिन्दी (नागरी) लिपि में भी लिख देते हैं।

शारदा लिपि में नमूने के तौर पर यहां कुछ श्लोक देवनागरी लिपि के साथ प्रस्तुत करते हैं—

(१) गीता

श्री भगवान् उवाच

कुतस्त्वा कश्मल मिदं विषमे समुपस्थितम् ।
अनार्यजुटमस्वर्ग्यमकीर्ति करमर्जुन ॥

क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदय दौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥

यावानर्थं उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ॥
मा कर्मफल हेतुर्भू मा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि ।

कार्पण्य दोषोपहत स्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे,
शिष्यस्तेहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्यात्
यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्।
अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धम्,
राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम्॥

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप।
न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत।
सेनयो रुभयोर्मध्ये विषीदन्त मिदं वचः॥

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्य सिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः॥

(३) वेद

कुछ वैदिक मन्त्र भी देखिये—

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावकाः,
यासु जातः कश्यपो यास्विन्द्रः ।
या अग्निं गर्भं दधिरे विरूपास्
ता न आपः शंस्यो नः भवन्तु ।।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकमयत्रानाः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।

(४) व्याकरण

यहां पर पाणिनीय अष्टाध्यायी के कुछ सूत्र नागरी और शारदा दोनों में प्रस्तुत करते हैं केवल नमूने के तौर पर विज्ञ पाठक स्वयं अन्तर जान सकते हैं—

टि ट् ढाण ञ् द्वय सच् दघ्नच्-मातृच्-तयप्·ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरप:

अप्-तृन्-तृच्-स्वसृ-नप्तृ-नेष्ट्र त्वष्ट्र क्षत्र होतृ पोतृ प्रशास्तृ णाम्

एत्येधत्यूठ्सु

(५) ईश्वरप्रत्यभिज्ञा से

𑆤𑆴𑆫𑆳𑆯𑆁𑆱𑆳𑆠𑇀 𑆥𑆷𑆫𑇀𑆟𑆳𑆢𑆲𑆩𑆴𑆠𑆴 𑆥𑆶𑆫𑆳
𑆨𑆳𑆱𑆪𑆠𑆴 𑆪𑆠𑇀,
𑆢𑇀𑆮𑆴𑆯𑆳𑆒𑆳𑆩𑆳𑆯𑆳𑆱𑇀𑆠𑆼 𑆠𑆢𑆤𑆶 𑆖 𑆮𑆴𑆨𑆑𑇀𑆠𑆶𑆁
𑆤𑆴𑆘𑆑𑆬𑆳𑆩𑇀 𑇅
𑆱𑇀𑆮𑆫𑆷𑆥𑆳𑆢𑆶𑆤𑇀𑆩𑆼𑆰 𑆥𑇀𑆫𑆱𑆫𑆟 𑆤𑆴𑆩𑆼𑆰 𑆱𑇀𑆡𑆴𑆠𑆴
𑆘𑆶𑆰-
𑆱𑇀𑆠𑆢𑇀𑆮𑆽𑆠𑆁 𑆮𑆤𑇀𑆢𑆼 𑆥𑆫𑆩𑆯𑆴𑆮𑆯𑆑𑇀𑆠𑇀𑆪𑆳𑆠𑇀𑆩
𑆩𑆒𑆴𑆬𑆩𑇀 𑇆

निराशंसात् पूर्णादहमिति पुरा भासयति यत्,
द्विशाखामाशास्ते तदनु च विभक्तुं निजकलाम् ।
स्वरूपादुन्मेष प्रसरण निमेष स्थिति जुष-
स्तद्वैतं वन्दे परमशिवशक्त्यात्ममखिलम् ॥

(६) शिवमहिम्न स्तोत्र से

अपूर्वं लावण्यं विवसन तनोस्ते विमृशताम्,
मुनीनां दाराणां समजनि सकोपव्यति करः,
यतो भग्ने गुह्ये सकृदपि सपर्यां विदधताम्,
ध्रुवं मोक्षोश्लीलं किमपि पुरुषार्थं प्रसवि ते ॥

(७) रघुवंश से

ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी, वधाय वध्यस्य शरं शरण्यः ।
जाताभिषङ्गो नृपतिर्निषङ्गात् उद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृतारिः ॥

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च ।
अल्पस्य हेतोर्बहुहातुमिच्छन् विचारमूढः प्रति भासि मे त्वम् ॥

क्वसूर्य प्रभवो वंशः
क्व चाल्प विषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहा-
दुडुपेनास्मि सागरम्॥

(८) राजतङ्गिणी से

जयन्ति ते सुकृतिनो
रस सिद्धाः कवीश्वराः
नास्ति येषां यशः काये
जरा मरणजं भयम्॥

(९) कश्मीरी भाषा

कश्मीरी-भाषा ईस्वीय १५वीं सदी तक शारदा लिपि में ही लिखी जाती थी। वास्तव में इस भाषा का साहित्य भी इसी लिपि में लिखा जाता था। इसकी पुष्टि कुछ प्राचीन रचनाओं से होती है। जैसे लोक प्रकाश, महानयप्रकाश और लल्लेश्वरी वाक्य आदि। जार्ज ग्रीयर्सन महाशय ने शारदा अक्षरों में जो कतिपय पृष्ठों में कश्मीरी भाषा में एक कथा दी है उस का कुछ अंश यहां उद्धत करते हैं—

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

*"Linguistic Survey of India"
vol. viii part II Page 317
Darda Group No 7 DADO Sub family

इसका हिन्दी अनुवाद

एक आदमी के दो पुत्र थे, उन में से छोटे ने पिता से कहा हे पिता ! मुझे धन का हिस्सा दीजिए जो मेरा हक है। उसके बाद उस (पिता) ने उनके लिए धन का बटवारा किया। कुछ दिनों के बाद छोटा भाई सब धन लेकर किसी दूर देश के लिए प्रस्थान कर गया। वहां उसने बुरे व्यसनों मैं पड़कर वह सारा धन खर्च कर दिया।

राष्ट्रीयगीत

[illegible]

जण गण मन अधिनायक जय हे,
भारत भाग्य विधाता,
पंजाब-सिन्धु-गुजरात मराठा
द्राविद-उत्कल बङ्गा
विन्ध्य-हिमालय यमुना-गङ्गा
उच्छल जलधि तरङ्गा
तव शुभनामे जागे, गावे तव जय गाथा,
जय हे, जय हे, जय जय जय हे ॥

तृतीय शिखा

वक्तव्य

प्रथमा और द्वितीया शिखा में शारदा लिपि के ऐतिहासिक गौरव की सप्रमाण विवेचना की है और इस लिपि के वर्ण और उन के विविध स्वरूपों को अति विस्तार से नागरी लिपि के समानान्तर उदाहरणों के समेत लिख दिया है। अब इस तृतीया शिखा में हमने इस लिपि में उपलब्ध शिलालेखों और अभिलेखों को संकलन करके प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। यों तो शारदा लिपि की अत्यन्त प्राचीन पाण्डुलिपियों से इस की प्राचीनता एवं व्यापकता स्वयं प्रमाणित होती है तथापि जो शिलालेख या अभिलेख कहीं कहीं पर प्राप्त हुए हैं उनसे इस लिपि की प्राचीनता और मान्यता तथा लिपि शैली एवं इसकी विविधता का साकार दर्शन होता है जो स्वयं अपने में अपना महत्त्व रखता है और इस लिपि के विषय में पूर्व प्रकरणों में वर्णित तथ्यों को निर्विवाद रूप से पुष्ट करता है। यहां पर हमने उपलब्ध शिलालेखों आदि की प्रतिलिपियां उनके समयक्रम के अनुसार संकलित की है। कश्मीर में जो शिलालेख उपलब्ध हुए हैं वह तो यहां प्रतिलिपि रूप में सब संकलित किए हैं और वस्तुत: अभी तक इन के अतिरिक्त और कोई नहीं मिला है। चम्बा, कांगड़ा और अन्य स्थानों पर जो शिलालेख या अभिलेख प्राप्त हुए हैं उनमें चम्बा स्टेट में प्राप्त हुए शिलालेखों का संकलन श्री पी. एच. वोगेल महाशय ने Antiquities of 'Chamba State' नामक ग्रन्थ में किया है। मैंने उनमें से कुछेक ही यहां संकलित किए हैं ताकि पाठकों को भी इसका कुछ आभास मिल सके। मैंने शारदा लिपि के बहुत से हस्तलिखित ग्रन्थों को देखा है। उन में से

एक पाण्डु लिपि ऐसी थी जो कागज और लिपि को देखने से पांच सौ वर्ष पूर्व की प्रतीत होती थी। यह जीर्ण शीर्ण और खण्डित थी। यह मैंने १९५६ ईसवीय सन में सुरक्षित होने के लिए पंजाब शिक्षा विभाग के एक मित्र को पंजाब (चण्डीगढ़) यूनिवर्सिटी के संग्रहालय में रखने के लिए भेजी थी। पाण्डुलिपि में मैंने यह विशेषता देखी थी कि अक्षरों के सिरों को एक दूसरे से नहीं मिलाया गया था। जैसे 'षरमानन्द' को शारद में इस तरह लिखा गया था।

इसी तरह (परमात्मा) आदि। अति प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों की प्राचीनता की यह एक विशेष पहिचान है। यहां पर दिए गए प्रतिलिपि पत्र १ में भी आप यह देख सकते हैं। रत्नकण्ठ की हस्तलिखित राजतरङ्गिणी को देखने से यह प्रतीत होगा कि अक्षरों को सिरों से मिलाया गया है और संयुक्त अक्षरों में भी विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। डॉ. स्टीन महाशय ने राज-तरङ्गिणी के संस्कृत मूल पुस्तक को मुद्रित किया है और उसके साथ रत्नकण्ठ की हस्तलिपि में लिखी राजतरङ्गिणी का एक फोटो स्टैट पत्र भी रखा है। उसको पढ़ने से यह प्रतीत होता है।

लिपि की प्राचीनता की यह भी पहचान मैंने पाई है कि जहां पर 'य' के साथ किसी भी व्यञ्जन का संयुक्त रूप होगा वहां पर 'य' के साथ संयुक्त रूप कुछ विचित्र प्रकार से लम्बा होता है, जैसे—'स्य' को हम 'मृ' इस तरह लिखा हुआ पाते हैं परन्तु प्राचीन लिपियों में यह रूप इस तरह का मिलेगा।

और इस प्रकार से मिलता है। इसी तरह 'क' के लिखने में भी कुछ परिवर्तन है। प्राचीन लेखों में इसको नागरी 'क' की तरह भी लिखा गया है। प्+और र का संयुक्त रूप प्राचीन लिपियों में इस तरह भी है परन्तु अर्वाचीन कालिक लिपियों में र्

को व्यञ्जन के साथ मिलाने पर प्र) या ग् के साथ 'ग्' इस तरह बाहिर लकीर निकाल कर लिखा जाता है।

जो जो प्रतिलिपि पत्र यहां उपस्थित किए गए हैं उनमें से विज्ञ पाठक इसको स्वयं देख सकते है। लीजिए अब प्रतिलिपियों का अवलोकन कीजिए—

लिपिपत्र १

कश्मीर पाञ्जोर के समीप रवुनमूह ग्राम के अन्दर अवस्थित एक लावदी (लापो) की दीवार में चुने गए एक अति पुरातम प्रस्तर खण्ड में यह अक्षर उत्कीर्ण हैं।

लिपिपत्र १

इसका विवरण कुछ इस पुस्तक की प्रथम शिखा में दिया है। इस के वर्ण भाषा तथा प्रस्त-खण्ड के देखने से यह लेख मुझे अति प्राचीन लगता था। अनुमानतः महाराजा तुञ्जीन के समय का [ईस्वीय पूर्व प्रथम शताब्दी] हो। यह भी संभावना से ही कहा जाता है कि इस अपभ्रंश मैं तो कश्मीरी भाषा का ही आदि रूप प्रतीत होता है किसी दुर्भिक्ष का संकेत है और ऐसा स्मरणीय दुर्भिक्ष महाराजा तुञ्जीन के समय में पड़ा था जिसका कारण वर्णन करते हुए पण्डित कल्हण कहते हैं—

'अथा कस्माच्छरच्छालिविनाशी नाशसूचकः।
मासि भाद्रपद घोरो हिमपातो महान भूत्॥' [राजतर० त० २]

यह शिलालेख डॉ० व्यूलर ने भी सन् १८७७ में देखा था जब वह इस गांव में विल्हण की गवेषणा के सम्बन्ध में आए थे। मैंने इसको अन्तिम बार सन् १९३३ में देखा था और इसकी प्रतिलिपि की थी।

लिपिपत्र २

Signature of Harsha Vardhan Ruler Kanauj A.D. 606-664.

From :—'History of India' by Michael Edwardes London 1961

विवरण लिपिपत्र दो का

यह सम्राट् हर्षवर्धन का लिखा हुआ राजकीय हस्ताक्षर है। इसमें अक्षरों का रूप शारदा लिपि के साथ अब भी मिलता जुलता है।

[स्य शारदा में अब भी समान हैं।

उसमें मात्रा और भू (स्कु) भी शारदा अक्षरों से साम्य रखते

---

१. "Detailed report of a tour in search of Sanskrit MSS."
By Dr. Buhler
Extra number of the Journal of the Bombay branch of the Royal Society Bombay & London 1877.

२. जोनराजतरंगिणी के सम्पादक डा० रघुनाथ सिंह को यह शिलालेख नहीं मिला जब वह यहाँ पर सन् १९६२ में गये थे 'कल्हणराजरंगिणी' डा० रघुनाथ सिंह का हिन्दी अनुवाद तरंग १, पृष्ठ १३

हैं। यों तो इसे गुप्तकालीन (वाकाटका] लिपि माना जाता है परन्तु इसमें शारदा लिपि का स्वरूप भी उसी तरह दृष्टिगोचर होता है जैसे अर्वाचीन चाल की शारदा लिपि का आज तक चलता आ रहा है। सम्पूर्ण वर्णों का लिपि-परिवर्तन करना जिस से संगतार्थ पद सन्दर्भ बन जाए कुछ कठिन है। परन्तु अन्तिम वर्णावली शायद **'हर्ष राजस्य'** इस रूप की बनती है।

सम्राट् हर्षवर्धन के हस्ताक्षर और मुद्राओं के वर्ण विन्यास चीनी अभिलेखागारों में यत्र तत्र ऐतिहासिकों ने प्राप्त किए हैं। हर्ष वर्धन की विद्या और विद्वानों का आदर

'अहो प्रभावो वाग्देव्या यन्मातङ्ग दिवाकरः।
श्री हर्षस्याभवत्सभ्यः समो बाण मयूरयोः॥'

इस संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध पद्य से सुप्रसिद्ध ही है।

लिपि-पत्र-३

तोरमाण (६ ठी शताब्दी) का 'ऐरण' प्रतिमा लेख
फलक (Plate) ५७
From—'गुप्त अभिलेख' डॉ. वासुदेव उपाध्याय से उद्धृत

लिपिपत्र का विवरण ३

यह एक लम्बा अभिलेख महाराजा तोरमाण (इ ५-६ शताब्दी) के समय का है। इसको यद्यपि संकलनकर्ता ने गुप्तकालीन 'वाकाटक गुप्त लिपि' माना है। परन्तु यह शारदालिपि से अभिन्न लगती है और शारदा

अक्षरों में ही वास्तव में लिखी प्रतीत होती है जिसका प्रमाण यहां पर लिपिपत्र में लिखे गये अक्षर हैं जो कि शारदा लिपि से पृथक् नहीं लगते ।

वाकाटक गुप्तकालीन लिपि के अनन्तर ही शारदालिपि का सम्पूर्ण उत्तरीय भारत में गौण रूप से प्रचलन रहा है। यह सभी मानते हैं जो कि पुरातात्त्विक लिपियों के विशेषज्ञ हैं ।

लिपिपत्र ४

Serain (Chamba) inscription
Inscribed (under) Devi Image 10th century
From—"Antiquities of chamba state PLATE XIII

ॐ स्वस्ति ॥ श्रीमद् रिह क्षूका र पितृ श्री केष्किन्धि विषयोत्पन्न सोमट पुत्र राजानक सकल गुण गणालंकृत शरीरो भोगटस्य

विवरण

यह शिला लेख सीरेन ग्राम (चम्बा) में अवस्थित भगवती की प्रतिमा पर उत्कीर्ण किया हुआ है। यह दसवीं सदी ई. का है।

'Antiquities of chamba state' Plate No. XIII

लेख-लिपिपत्र ५

स्वस्ति श्री महाराजाधिराज परमेश्वर श्री मृत्युञ्जयदेव (। यथा देवा ज्ञया:…

9th Century "Antiquities of chamba state"
Page. 148, Plate XIII

विवरण

यह नवीं सदी ई. समय के शिलालेख की प्रतिलिपि है—शारदा के साथ नागरी लिपि भी उत्कीर्ण है। यह 'चम्बा' (हि. प्र.) के किसी देव स्थान में अवस्थित शिला लेख की प्रति लिपि है। नवीं सदी के प्रान्त के शासक महाराजा मृत्युञ्जय देव के समय का है। इस में शारदाक्षरों 'ॐ स्वस्ति' के अनन्तर' ‌ ' क होना इस बात का संकेत करता है— 'ओकसंगोर' का विन्यास 'स्वस्ति' के अनन्तर होता था, इसका वर्णन पहले ही २ भाग में हम कर चुके हैं।

प्रतिलिपि ६

بسال ز نصر و شنا در پید شهادت

یافت - بر تخت گاه نگهبان سید

خان شهید (889 Hijri, 1484 A.D.)

Grave inscription in the grave yard of Baharuddin shrine (Pravareshwar Ruins) in Srinagar.

यह शिलालेख—जिसकी यहां पर यह प्रतिलिपि है—मुसलमानी, शासन काल (१४४८ ई.) बादशाह मुहम्मद शाह के समय का है। यह सुलतान सैदखान नामक शत्रु को मार कर कश्मीर आने पर मुहम्मद शाह के विजय के उपलक्ष्य में स्थापित किया गया था। इससे यह विदित होता है कि बादशाह मुहम्मद शाह के समय भी शारदा लिपि मान्यलिपि

और फारसी लिपि के साथ ही प्रधान रूप से प्रचलित थी और हिन्दू-धर्मस्थानों के प्रति आदर की भावना नष्ट नहीं हुई थी। प्रवरेश्वर का मन्दिर श्री नगर में शंकर का परम श्रद्धास्थान बना हुआ मन्दिर था। इसका निर्माण महाराजा प्रवरसेन (ई. ५१०) ने किया था और इनके छत्त का भेदन कर प्रवरसेन आकाशमार्ग से उत्तर दिशा की तरफ जाता दिखाई दिया था। इस छत में जो छिद्र बन गया था वह स्मारक के रूप में कल्हण के समय तक भी मौजूद था। इसका वर्णन महाकवि विल्हण ने भी इस प्रकार किया है—

"गेहं यत्र प्रवर गिरिजा वल्लभस्याद्भुतं तत्,
केषामाशां सुरपति पुरारोहणे नो तनोति।
यत् यातस्य प्रवर नृपते द्यां शरीरेण सार्धं,
स्वर्ग द्वार प्रतिममुपरि छिद्रमद्यापि धत्ते॥"

(विक्रमांकदेवचरितम् सर्ग १८)

इस मन्दिर के ध्वस्त अवशेषों में मन्दिर का बडा कपाट डॉ. स्टीन महोदय ने सन् १८८२ में वहां देखा था। आजकल इसे 'बहाउद्दीन की ज़ियारत' कहते हैं। शिलालेख के वर्णन के अनुसार यह ज्येष्ठरुद्रमूल' में स्थापित किया गया था। ज्येष्ठरुद्र वर्तमान शंकराचार्य मन्दिर का नाम था और उस के मूल का अभिप्राय पर्वत के पूर्वीय दामन में वर्तमान ज्येष्ठेश्वर (जीठिपर-गोपकार) के पास इसे स्थापित किया गया था। 'प्रवरेश्वर' के पास इसको संभवतः बाद में लाया गया हो। डॉ. स्टीन महाशय ने भी इसका निर्देश नहीं किया है। लेख की लिपि सुवाच्य और स्पष्ट है।

प्रतिलिपि ७

वक्तव्य

बिन्दु और रेखाओं के रूप में यह संकेत जानना चाहिये कि उन उन स्थानों के अक्षरों को नष्ट किया गया है।

विवरण

मार्तण्ड के खण्डरातों की खुदाई सन १६२२-२४ में शुरू हुई थी। उसी समय मार्तण्ड के अन्तर्गृह के पूर्वीय कोने पर एक बड़ा चौढ़ा प्रस्तर पर खुदा हुआ शिला लेख पाया गया था। उस समय यह पूर्ण था और इसके नीचे समय का निर्देश और महाराजा अवन्तिवमी का नाम भी पढ़ा गया था। किन्तु इसकी सुरक्षा की व्यवस्था न होने के कारण यह उपेक्षित अवस्था में ही पड़ा रहा। मेरे पूज्यमामा जी एक दिन मुझे वहाँ ले गये। हम ने देखा कुछ बच्चे इस शिलालेख को पत्थर के टुकड़ों से खराब कर रहे थे। फिर हम दूसरे दिन वहाँ गए और मामा जी की प्रेरणा से इसकी प्रतिलिपि मैंने उतारी। तब तक तो इस शिलालेख का अगले और पीछे के बहुत से अक्षर मिटाए गए थे। यह सन् १६३१ की बात है। यहाँ पर जो प्रतिलिपि की भी प्रतिलिपि प्रस्तुत की गई हैं।

उसमें अक्षर स्पष्ट पहचाने जा सकते हैं। यह शिलालेख संस्कृत पद्यों में है। छन्द 'शिखरिणी' है।

प्रतिलिपि ८

'हिन्दूविश्व' नामक एक पत्रिका में प्रकाशित एक लेख के 'मुख पृष्ठ पर चित्रित अग्निदेव का चित्र है जिसको जापान में 'वनहन' (संस्कृन-वह्नि) कहते हैं। लिपि "शारदा लिपि" है क्योंकि अब भी हम (वह्नि) 'वनहन' ठीक शारदा के इन्हीं अक्षरों-
इसी प्रकार लिखते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि इस लिपि का प्रसार विदेशों में भी था। संभवत: लिपि को धार्मिक आदर से देखा जाता था।

From—"Hindu Vishva"
Chaitra [Saka] 1899, Vikram samvat 2934.
Published by Vishva Hindu parishad, Karol Bagh Gurdwara Road, New Delhi

A Chart showing some Indian Scripts

ASHOKAN BRAHMI
3rd cent. B.C.

GUPTA-VAKATAKA BRAHMI
4th-5th cent. A.D.

CENTRAL ASIAN CURSIVE
5th-6th cent. A.D.

✓ SHARADA

VATTELUTTU
8th cent A D

From:

Ancient India

A text book of history for Middle Schools

Published by

National Council of Educational Research and Training

July 1973

विवरण Pratilipi 9

यहां पर यह प्रतिलिपि इस लिये प्रस्तुत की गई है कि पाठक 'शारदा लिपि का प्रचार गुप्तकालीन वाकाटक लिपि के साथ साथ हुआ था' यह सप्रमाण मान सकें। यह हमने इस पुस्तक की 'प्रथमा शिखा' में शारदा लिपि के उत्पत्ति-काल के प्रसंग में स्पष्ट किया है।

शारदा की प्राचीन पाण्डुलिपियों के कुछ पत्रों की फोटोस्टेट प्रतिलिपियां तथा उनका नागरी लिपि में रूपान्तर। यह पाण्डुलिपि दो सौ वर्ष लगभग पुरानी है। यद्यपि यह अत्यन्त अर्वाचीन काल की हैं परन्तु इन की लिपि शारदालिपि के संयुक्त अक्षरों के लिखने की शैली पर पर्याप्त प्रकाश डालती है।

पत्र संख्या १

(१) महात्मनः, चक्रेण प्राहरत्तत्र वाराहं पर्वतोत्तमम् ।
(२) हरिः परमकारुण्याज्जलापसरणं ततः सोऽकरोत्
(३) कश्यपस्यार्थे पुण्यस्य सरसः प्रिये निस्सृतं तु जलं
(४) दृष्ट्वा हरिः परम कार (रु) णः । ददर्श तत्र सरसिं
(५) सौवर्णमण्डमेकतः । दृष्ट्वा मृतं तदण्डं च
(६) चक्रेण प्राहरद्धरिः । चक्रप्रहरात्तत्रेशि तेजः
(७) पुञ्जः समभवत् । तेजः पुञ्जेन देवेशि व्याप्त-
(८) मासीज्जगत्तदा । दृष्ट्वा देवाः तेजसश्च पञ्च
(९) पुञ्जैर्महेश्वरि , नेत्राणि मीलयांचक्रुस्तेजः
(१०) पुञ्जे क्षतानि वै तेजसो जगदेशानि याः ज्वालाः
(११) प्रसृतः प्रिये, ताभिर्विभ्राजितो लोकस्तस्मात्…

(१) भ्राडिति कथ्यते । यत्र विभ्राजितो लोकः ज्वालाभि

(२) र्जगदम्बिके । स ग्रामो भ्राडिति ख्यातः पावनस्तत्र

(३) पारगः । यत्र स्थितानां लोकानां ज्ञानेन नश्यते (ति) तमः

(४) तस्माद् भ्राडिति लोकेऽस्मिन्ग्रामो जगति कीर्त्यते

(५) आन्ध्यंदूरी कृतं यत्र तेजसात्वाजगदे(दे)श्वरि । तस्मादन्धो-

(६) रको ग्रामः प्रथितो भुवन त्रये । तेजः पुञ्जं तदा दृष्ट्वा

(७) देवाः विस्मयमाययुः । हर्ष गद्गदया वाचा (१)

(८) परमात्मानमैडयन् । देवाः । रुद्रं भद्रं भवमी शान

(९) मुग्रं कर्पादिनं शिपिविष्टं पराध्यर्म् मीढु

(१०) ष्टमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं प्रपद्ये शरणं तं भवेशम्

(११) । १ । भवं भवादिं भवभाव्यं भयादं भव्यातमानं

ओं सञ्जय उवाच । तं तथा
कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥
श्री भगवान् उवाच । कुतस्त्वा कश्मल-
मिदं विषमे समुपस्थितम् । अनार्य
जुष्ठमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥
क्लैब्यंमास्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठपरन्तप ॥ ३ ॥

प्राचीन पाण्डुलिपियों का विवरण

शारदा लिपि के यह फोटोस्टेट किये गये पत्र प्राचीन शारदा लिपि के हस्तलिखित 'मार्ताण्ड कथा' और 'मार्ताण्ड माहात्म्य' ग्रन्थों के हैं। यह विक्रमीय संवत् १८८६ के हैं। इनसे पाठकों को इस बात का भी पता लगेगा कि कठिन संस्कृत पदों के सिरों पर रिक्त प्रदेशों के पास सूक्ष्म-शारदा अक्षरों में उन पदों के अर्थ कश्मीरी भाषा में लिखे हुए हैं। ऐसा प्रायः कश्मीर में सभी प्रकार की पाण्डुलिपियों में पाया जाता है।

शारदा लिपि के कश्मीर तथा कश्मीर के बाहर उपलब्ध शिलालेखों का संक्षिप्त विवरण

हमने इस पुस्तक के प्रारम्भ में यह सप्रमाण लिखा है कि शारदा लिपि उत्तरीय भारत में ब्राह्मी लिपि के अनन्तर मुख्य लिपि के रूप में प्रचलित[१] थी। यहां पर इस लिपि में उपलब्ध उन शिलालेखों का संक्षेप से विवरण देंगे जो विगत कुछ दशकों में और इसके पूर्व भी पाये गये हैं और सुरक्षित रखे गये हैं।

इनकी संख्या ६८ है। इनका विस्तृत विवरण 'Sources of The History of India' नामक ग्रन्थ के द्वितीय भाग के पृष्ट ४५६ से ४७१ तक दिया गया है। यहां पर केवल उनमें कुछ का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करेंगे। ग्रन्थकार के वचनों में ही इनकी संख्या इस प्रकार है—

---

१. मार्तण्ड के पण्डित श्यामलाल मूसा के सौजन्य से प्राप्त।

२. 'Though an alphabet of Kashmir par excellence, the Sharada has remained for several centuries a popular script of an extense area of North Western India including Gandhara or The North Western part of West Pakistan, Ladakh, Jammu, Himachal Pradesh, Panjab and Hariyana.'

Sources of the History of India. Vol. II P. P. 549

"In all 98 inscriptions have been discovered so for, 12 in North western Pakistan, 35 in Kashmir, 6 in Jammu, 5 in Ladakh, 36 in Chamba 2 in Kangra, and 1 in Haryana."

Sources of the History of
India, vol. II Page 60
Published in 1979 in Culcutta

यहां पर केवल कुछ विशेष महत्त्व के शिलालेखों का ही विवरण संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं।

१. अटक शिलालेख

यह पश्चिमीय पाकिस्तान के 'अटक' जनपद के 'हुण्ड' [HUND] नामक गांव में प्राप्त हुआ था।

इस पर संवत् १६८ खुदा हुआ है और पुरातत्त्व विशारदों के मत से हर्षवर्धन के राज्याभिषेक का संवत् है। इस तरह इसका काल सन् ७५० ई० का माना जा सकता है।

२. महारानी दिद्दा कालीन २ शिलालेख

इनमें एक 'बोधिसत्त्व पद्मपाणि' की मूर्ति के नीचे उत्कीर्ण है। इस पर लौकिक संवत् ६५ उत्कीर्ण है। यह श्रीनगर के श्री प्रताप संग्रहालय [S. P. S. Museum] में मौजूद है।

दूसरा शिलालेख श्रीनगर के किसी घर में पाया गया था और इस समय यह पाकिस्तान (लाहौर) के संग्रहालय में है। इस पर भी लौकिक संवत् ६८ उत्कीर्ण है। इस तरह यह दोनों शिलालेख सन् ९८९ और सन् ९९२ ई० के हैं।

इसमें महारानी 'दिद्दा' के शौर्य और दान का वर्णन है।

३. कष्टवार शिलालेख

यह कश्मीर नरपति अनन्तदेव के राज्य के समय का है। यह कष्टवार के 'दद्दिन' नामक स्थान पर पाया गया था। इस पर लौकिक सम्वत् १२ उत्कीर्ण हैं और यह सन् १०२८-१०६३ ई० का हो सकता है। यह 'महिम गुप्त' नामक व्यक्ति के द्वारा पुल बनाने के समय वहां स्थापित गया था।

४. जयसिह कालीन-शिलालेख

इस पर लौकिक संवत् २५ खुदा हुआ है। गणना के आधार पर यह सन् ११४६ ई० का है। इसमें किसी 'भट्ट गोविन्द' नामक व्यक्ति के पुत्र के द्वारा वहां पर एक देवप्रतिमा स्थापित करने का वर्णन है।

५. ग्रॉरीगोम [हार्डि ग्राम] शिलालेख

यह एक सुन्दर पत्थर पर उत्कीर्ण शिला लेख है। यह भी महाराज जयसिह के समय का है। इस पर लौकिक संवत् ७३ अंकित है। इस पर यह सन् ११९७ ई० का हैं। उससे यह प्रतीत होता है कि १२वीं सदी तक भी कश्मीर में बौद्ध मत का प्रचार था। इस समय यह श्रीनगर के 'श्रीप्रतापसिंह म्यूजियम' में सुरक्षित है। यह शिलालेख पूर्ण तथा धार्मिक महत्त्व तथा ऐतिहासिक महत्त्व का है।

६. तापर [प्रतापपुर] का प्रस्तर शिलालेख

यह एक विशाल शिला पर उत्कीर्ण 'शिलालेख' है। यह उस मन्दिर के चौखट का पत्थर प्रतीत होता है जिसको 'जगराज' के पुत्र 'गग्ग' ने बनवाया था। यह महाराजा जयसिह के पुत्र 'परमाणुदेव' के राज्यकाल का है। इस पर लौकिक संवत् ३३, आषाढ़ शुक्ल पक्ष पूर्णमासी का समय उत्कीर्ण है और इस तरह यह सन् ११५७ के समय का है।

इस समय यह श्रीनगर के 'श्री प्रताप म्यूजियम [S. P. S. Museum] में सुरक्षित है।

७. बिज बिहारा [विजयेश्वर] का प्रस्तर शिलालेख

यह शिलालेख श्री जोहन मार्शल को एक ब्राह्मण के घर में मिला था। यह महाराजा जगदेव के पुत्र राजदेव के समय का है। इसका समय लौकिक सम्वत् ४३ और वैशाख शुक्ल सप्तमी इस पर उत्कीर्ण है। इसको आचार्य 'कमल श्री' के द्वारा 'लोकेश्वर भट्टारक मण्डलम्' की अर्चना के लिए लिखा गया था। इस पर एक चक्राकार गोल गोल चिह्न है। यह तान्त्रिक रहस्य का प्रतीत होता है। यह गणना के अनुसार सन् १२३६ ई० का है। इस समय यह श्रीनगर के किसी प्राइवेट घर में मौजूद है।

८. कपटेश्वर [कोटिहेर] शिलालेख

यह शिलालेख कपटेश्वर के पास एक कुएं की दीवार पर चुना हुआ 'जोधा' नामक एक महिला ने देखा था। इस पर कश्मीर के प्रसिद्ध मुस्लिम बादशाह 'शहाबुद्दीन' की वंशवर्णना और कीर्ति उत्कीर्ण है इसमें यह लिखा है कि बादशाह शहाबुद्दीन पाण्डव वंशी थे। इस पर गणेश जी की भी स्तुति की गई है। इस समय यह श्रीनगर के 'प्रताप म्यूजियम [S. P. S. Musenm] में सुरक्षित है। यह शिलालेख खराब हुआ लगता है।

९. खुनमूह शिलालेख

यह शिलालेख खुनमूह से उत्तर की तरह 'डेड़ मील की दूरी पर अवस्थित 'भुवनेश्वरी' तीर्थ के एक छोटी सी नदी के उद्गम स्थान पर 'हर्षेश्वर' तीर्थ के समीप पाया गया था। यह जैनोल्लाबदीनशाह' के समय [सन् १४२८ ईसवीं] 'पूर्णक' नामक एक सेठ ने 'गोमतीसूदक' नाम वाले एक तपस्वी के लिए बनाए गए 'भव्य-आश्रम' के निर्माण के समय स्थापित किया गया था। इस पर वर्णों को उत्कीर्ण करने वाले का नाम 'गग्गक' ओर उसके पार्श्ववर्ती 'कठ' और 'कण्ठक' थे। इस प्रस्तर का आकार चतुर्भुज है। इस पर दस पंक्तियों में पद्यों के रूप में

लिखा गया है और ऊपर केवल कलि संवत् ४५३० गद्य में लिखा गया है। इसमें देशाधिपति [District officer] का नाम 'चण्डक' लिखा है और उसके साथ ही सुल्तान जैनोल्लाबदीन का नाम भी है।

१०. जाजीनय [वॉडवन] प्रस्तर शिलालेख

यह शिलालेख कश्मीर के दक्षिण पूर्व में अवस्थित 'वाड़वन' नामक सुन्दरवादी के एक ग्राम ज़जीनय [zaji Nai] की एक पहाड़ी के पास पाया गया था। इसके बहुत से अंश मिटे हुए हैं। इस पर 'अश्वपदिम्' अश्व गोरक्षा, अश्वपीठम्' यह शब्द और घोड़े की एक आकृति उत्कीर्ण है। उससे प्रतीत होता हैं कि यहां पर 'अश्वशाला' [Stable] बनाई गई थी। इस समय यह [S. P. S.] म्यूजियम में है

१२. उस्कर का शिलालेख

यह शिलाखण्ड को उत्कीर्ण किया गया है इस पर एक अश्वारोही को दिखाया गया है जिस के हाथ में लटकाया खड्ग, गदा, भाला और कन्धे पर धनुष बाण शायद है यह बादशाह जैनोल्लाबदीन शाह के समय का हो और ई० सन् १५०६ का है। वैसे तो इसमें माघ कृष्ण पक्ष नवमी लौकिक संवत् पर उत्कीर्ण किया हुआ है। यह किसी नवनिर्मित राजकीय भवन पर स्मारक के रूप में रखे गए शिलाखण्ड का एक भाग प्रतीत होता है।

इस शिलालेख से यह तथ्य सामने आता है कि शारदा लिपि मुसलमानों के शासन काल में ईस्वीय १५वीं सदी तक भी सर्वत्र प्रचलित थी और राज्य द्वारा पूर्णतया सम्मानित थी और राजकीय व्यवहार में लाई जाती रही।

देखो—Kashmir under the Sultans
By
Mujibul Hussain Page 266
Printed in 1959 Culcutta

अन्य-शिलालेख

इन शिलालेखों के अतिरिक्त शारदा लिपि के कई अन्य खण्डित शिलालेख भी यत्र तत्र प्राप्त किए गये हैं। यह सब अत्यन्त अस्पष्ट तथा त्रुटित हैं इन की लिपि शैली से यह भी बहुत प्राचीन समय के प्रतीत होते हैं। यह टुकड़े श्रीनगर के म्यूजियम में रखे गये हैं। यह शिलालेख जिन स्थानों में पाये गये हैं उनके नाम यहां निर्दिप्ट करते हैं—

(१) लुदुव—पाम्पोर के समीप

(२) अवन्तिपुर

(३) बिज बिहारा (विजयेश्वर)

(४) उलरहोम-पहलगाम के पास

(५) मार्तण्ड

(६) दिगोम (देग्राम) खन्ना बल और करजांगुण्ड के बीच जम्मू श्रीनगर राजमार्ग पर

(७) कमाल मोचन-शुपदान के पास

(८) लस्टीयाल (Lastiyal)

(९) परैंपोर—हन्दवारा परगनामें

(१०) सोगम (कमराज़ में)

शारदा की पाण्डुलिपियां—अन्यत्र भी

शारदा लिपि के हस्तलिखित ग्रन्थ न सिर्फ कश्मीर में ही केवल उपलब्ध हो रहे हैं। बल्कि कश्मीर के बाहर अब भी प्राप्त हो रहे हैं। पेशावर (पश्चिमोय पाकिस्तान) के पास 'बक्शाली' नामक गांव में भी एक शारदालिपि में लिखा ग्रन्थ मिला था। देखिए:—

'While the use of the sharada alphabet in the inscriptions……when we found it first used in manuscripts in Peshawar district of West Pakistan. The manuscript

which contains an important work on Mathematics bears no date but on paleographic grounds it can be assigned to the twelfth century A. D.'

Sources of the History of India
Vol. II Page 460

'ब्रोच' (Broach) का

ताम्रपत्र-अभिलेख

एक ताम्रपत्र दानपत्र के रूप में उपलब्ध हुआ है। यह 'ब्रोच' के शासक नरपति 'दद्दा' तृतीय के शासन काल ईस्वीय ६७५ सन् का है। इस की लिपि शारदा लिपि ही प्रतीत होती है। यद्यपि संकलन कर्ता ने लिपि का निर्देश नहीं किया है परन्तु इसके वर्ण प्रायः सुस्पष्ट और सुवाच्य है। इसमें १५ पंक्तियां हैं। प्रत्येक पंक्ति में ३५-४० वर्ण हैं। अक्षर परस्पर भिन्न हैं। यह स्पष्ट ही शारदालिपि का गुप्तकालीन रूप है।

इसमें 'णु, प्तु, कृ' जैसे अक्षर अब भी शारदालिपि में इसी तरह लिखे जाते हैं। अक्षरों की फोटोस्टैट प्रतिलिपि धुन्धली हो गई है नहीं तो सम्पूर्ण अभिलेख का नागरी रूपान्तर भी हो सकता था।

देखो:-

Copper-plate charter of king dadda III of Broach dated A. D. 675

Department of Archaeology government of India.

From—"**The Wonder that was India**"

Page 502-3 A.L. Basham
London 1967

Plate No—LXXXIX

हमारी शिथिलता

Rare manuscripts gathering dust

By Our Staff Correspondent

BHOPAL, December 3.

NEARLY 20,000 rare manuscripts collected from various parts of the country since the early thirties are gathering dust at the Scindia Oriental Institute in Ujjain.

Among them is part of the 1,300-year-old manuscript of "Baudhagam" found in the Gilgit area about 400 years ago. The rest of this manuscript is preserved in the Kyoto temple in Japan. The manuscripts collection at the Scindia institute include the Persian translation of the Upanishads by Dara Shikoh, palm leaf scriptures and "Shrimad Bhagwat" closely inscribed in small letters on a paper ribbon measuring 30 metres in length.

This correspondent, who visited the institute recently, found the manuscripts stacked in closed wooden shelves, unclassified, uncared for and probably untouched for years.

The staff of four persons posted at the institute seemed neither adequate nor qualified enough to take care of rich collection of rare manuscripts that they well be totally lost to white ants, if prompt steps are not taken to salvage them.

According to one estimate, about 500 of the manuscripts are at an advanced state of decay. They are likely to crumble to bits if handled by inexperienced hands. Scores of other manuscripts need immediate chemical treatment.

The institute has no director. Nor does it have a proper budget. It receives an ad hoc annual grant that hardly covers staff salaries and routine establishment expenses. The intitute, housed in a portion of a building belonging to the district authorities, has not been paying the rent regularly. Incidentally, the building is not designed for a manuscripts library. It was occupied by a contingent of the home guards before Vikram University took over the institute in 1968.

Earlier the manuscripts had been dumped in a rented house under the administrative care of the divisional superintendent of education. When the institute was under Madhya Bharat government before 1956 it was looked after by an inspector of schools.

The institute was set up in 1931 with 11 rare manuscripts collected by the Scindias of Gwalior. By 1954 the collection numbered 9,794. The manuscripts, on a wide range of subjects, had been acquired mainly from individual owners in various

Continued on page 9 column 8

यह समाचार-पत्र (टाइम्स ऑफ इण्डिया) की एक 'कटिंग' यहां पर चिपकाई गई है। विज्ञ पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं कि इस नवयुग में भी जब कि देश के अन्दर शोधकार्य' ('गवेषणा' और 'अनुसंधान' करने

की गतिविधियों की परिचर्चा होती रहती हैं, हमारी पाण्डुलिपियों की यह दशा हो रही है। इसका कारण क्या हो सकता है ? यह चिन्तनोय है।

इति निगदितमेतत् 'शारदा वर्ण' वृत्तम्,
ललित लिपि सुशैलीशिक्षणायातिशस्तम्।
खयुग गगननेत्रे (२०४०) वैक्रमे माधवेस्मिन्,
बुधजनपरितोषाद् स्यात् बटूनां हिताय॥
देवी भर्ग शिखा पुष्ये 'मार्तण्डे' लब्धजन्मना।
तिक्कूपाह्वेन रचिता श्रीनाथेन कृतिरियम्॥

समाप्ता चैषा त्रिशिखादीपिता
शारदालिपिदीपिका'।
इतिशम्।

BIBILOGRAPHY

उन ग्रन्थों की सूची जिन से इस पुस्तक के लिखने में विशेष सहायता मिली है—

संख्या	ग्रन्थ का नाम
१	Linguistic Survey of India
२	Antiquities of Chamba State
३	Sharada alphabet (R.A.S.B.) Journal Extra No
४	प्राचीन लिपिमाला
५	Huns in India
६	राजतरंगिणी (कल्हण, (Stein)
७	राजतरंगिणी (कल्हण) डा. रघुनाथसिंह अनुवाद
८	जोनराज तरंगिणी अनुवाद डा. रघुनाथ सिंह कृत
९	"तवारीखे कश्मीर" परीहासन कृत
१०	Studies of the Kashmir Council of Research
११	Cultural Heritage of India
१२	Kashmir Vocabulary
१३	श्रीकण्ठ चरितम्
१४	विक्रमांकदेवचीरतम्
१५	कर्ण सुन्दरी नाटिका
१६	History of India (London) by Micheal Edwa-rdes)

१७ Detailed Report of a Tour in search of Sanskrit Mss Dr. Buhler Extra No of (R. A. S.) Bombay Journal

१८ Coins of Medieval India

१९ काव्यप्रकाश

२० औचित्यविचारचर्चा

२१ अवदान कल्पलता

२२ राजनिघण्टु

२३ स्तुतिकुसुमाञ्जलि रत्नकण्ठ लघुविवृति

२४ Study of Indian History

२५ सौन्दर्यलहरी

२६ गुप्त-अभिलेख

२७ Sources of the History of India

२८ The Woder That was India